मंगल-प्रभात

गांधीजी

अनुवादक
अमृतलाल ठाकोरदास नाणावटी

जो चीज आत्माका धर्म है, लेकिन अज्ञान या दूसरे कारणोंसे आत्माको जिसका भान नहीं रहा, अुसके पालनके लिअे व्रत लेनेकी जरूरत होती है।

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

घाया किया। अबकी बार वह लेख (१३ अ) शामिल करके आश्रम-व्रतोंकी विचारणा[1] पूरी की है।

जैसा कि अूपर कहा गया है, ये प्रवचन मंगलके प्रभातको लिखे जाते थे, अिसलिअे अिस प्रवचन-सग्रह[2]का नाम 'मगल-प्रभात' ही रखा गया है। हमारे कौमी जीवनमें जब निराशा[3]का घोर साम्राज्य फैला था, तब जिन व्रतोंने राष्ट्रीय जीवनमें आशा, अपने आप पर भरोसा, फुर्ती और धार्मिकता[4]की हवा पैदा की, अुन्ही व्रतोंने अेक नयी सस्कृति —नये तमद्दुनका मगल-प्रभात शुरू किया, अैसा अगर हम मानें तो वह कुछ ज्यादा न होगा।

दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर

तफमीर।

लेकिन सत्यको, जो पारसमणि जैसा है, जो कामधनु जैसा है, कैसे पाया जाय? अुसका जवाब भगवानने दिया है; अभ्यास[1]से और वैरागसे। सत्यकी ही चटपटी अभ्यास है, अुसे छोडकर और सब चीज़ोंके बारेमें बिलकुल अुदासीनता–लापरवाही वैराग है। फिर भी हम देखते रहेंगे कि जो अेकके लिअे सत्य है वह दूसरेके लिअे असत्य है। अिससे घबरानेका कोअी कारण नही है। जहा शुद्ध कोशिश है वहा अलग अलग दीखनेवाले सब सत्य अेक ही पेडके अलग अलग दीखनेवाले अनगिनत पत्तोंके समान हैं। क्या परमेश्वर भी हरअेकको अलग अलग नही दिखाअी देता? फिर भी वह अेक ही है यह हम जानते हैं। लेकिन सत्य नाम ही परमेश्वरका है। अिसलिअे जिसे जैसा सत्य दिखाअी दे अुसके मुताबिक वह बरते अिसमें दोष[2] नही है। अितना ही नही, वही अुसका फर्ज़ है। फिर अैसा करनेमें कोअी गलती होगी तो वह ज़रूर सुधर जायेगी। क्योंकि सत्यकी खोजके [illegible]तपस्या होनेसे खुदको दुःख सहना होता है, अुसके [illegible] होना है। अिसलिअे अुसमें स्वार्थ[3]की तो [illegible]। अैसी निःस्वार्थ खोज करते हुअे [illegible] रास्ते अखीर तक नही गया। [illegible] लगती ही है। और फिरसे [illegible]जाता है। अिसलिअे ज़रूरी है [illegible] (सत्यकी) भक्ति। और भक्ति

[illegible]

ज्ञान, अिल्म शब्द जोड़ा गया है । और जहां सत्य ज्ञान है वहा आनंद होना ही है; शोक, रंजोग़म हो ही नही सकता । और सत्य सदा–हमेशा है, अिसलिअे आनंद भी हमेशा है । अिसलिअे अीश्वरको हम सच्चिदानंद (सत्-चित्-आनंद) नामसे भी पहचानते है ।

अिस सत्यकी भक्तिके खातिर ही हमारी हस्ती हो । अुसीके लिअे हमारा हरअेक काम, हरअेक प्रवृत्ति हो । अुसीके लिअे हम हर सांस ले । अैसा करना हम सीखें तो दूसरे सब नियमोंके पास भी आसानीसे पहुंच सकते है; और अुनका पालन भी आसान हो जायगा । सत्यके वग़ैर किसी भी नियमका शुद्ध पालन नामुमकिन है ।

साधारण तौर पर सत्य मानी सच बोलना अितना ही हम समझते हैं । पर हमने तो विशाल अर्थमे[१] सत्य शब्दका अिस्तेमाल किया है । विचारमें, बोलनेमें और बरतनेमें सचाअी ही सत्य है । अिस सत्यको पूरा-पूरा समझनेवालेके लिअे जगतमे और कुछ जाननेको नही रहता, क्योंकि समूचा ज्ञान अुसमें समाया हुआ है यह हमने अूपर देखा । अुसमें जो न समाये वह सत्य नही है, ज्ञान नही है; फिर अुसमे सच्चा आनंद तो हो ही कहासे?

अगर अिस कसौटीको बरतना हम सीख जाये, तो हमें तुरन्त मालूम हो जायगा कि कौनसा काम करने जैसा है, और कौनसा छोड़ने जैसा, क्या देखने लायक है और क्या नहीं; क्या पढ़ना चाहिये और क्या नही ।

---

१. बड़े मानीमें ।

लेकिन सत्यको, जो पारसमणि जैसा है, जो कामधनु जैसा है, कैसे पाया जाय? अुसका जवाब भगवानने दिया है, अभ्यास[1]से और वैरागसे। सत्यकी ही चटपटी अभ्यास है, अुसे छोड़कर और सब चीज़ोंके बारेमें बिलकुल अुदासीनता—लापरवाही वैराग है। फिर भी हम देखते रहेंगे कि जो अेकके लिअे सत्य है वह दूसरेके लिअे असत्य है। अिससे घबरानेका कोअी कारण नहीं है। जहां शुद्ध कोशिश है वहां अलग अलग दीखनेवाले सब सत्य अेक ही पेड़के अलग अलग दीखनेवाले अनगिनत पत्तोंके समान हैं। क्या परमेश्वर भी हरअेकको अलग अलग नहीं दिखाअी देता? फिर भी वह अेक ही है यह हम जानते हैं। लेकिन सत्य नाम ही परमेश्वरका है। अिसलिअे जिसे जैसा सत्य दिखाअी दे अुसके मुताबिक वह बरते अिसमें दोष[2] नहीं है। अितना ही नहीं, वही अुसका फर्ज़ है। फिर अैसा करनेमें कोअी गलती होगी भी तो वह जरूर सुधर जायेगी। क्योंकि सत्यकी खोजके पीछे तपस्या होनेसे खुदको दुःख सहना होता है, अुसके पीछे मर मिटना होता है। अिसलिअे अुसमें स्वार्थ[3]की तो बू भी नहीं रहती। अैसी निःस्वार्थ खोज करते हुअे आज तक कोअी गलत रास्ते अखीर तक नहीं गया। गलत रास्ते गया कि ठेस लगती ही है। और फिरसे वह सीधी राह पर आ जाता है। अिसलिअे जरूरी है सत्यकी आराधना यानी (सत्यकी) भक्ति। और भक्ति

१. मश्क। २. गलती। ३. खुदगरज़ी।

तो सिरका सौदा (शीश तणुं साटुं) है; या वह 'हरिका मार्ग' होनेसे अुसमे कायर-डरपोकके लिअे स्थान नही है, अुसमे हार जैसी कोअी बात ही नही है। वह तो मरकर जीनेका मंत्र है ।

पर अब हम करीब करीब अहिंसाके किनारे आ पहुंचे हैं। अुसका विचार हम अगले हफ़्तेमें करेंगे।

अिस मौके पर हरिश्चंद्र, प्रह्लाद, रामचंद्र, अिमाम हसन-हुसेन, ख्रिस्ती सत वगैराके दृष्टान्तो[1]का चिंतन[2] करना चाहिये। दूसरे हफ़्ते तक बालक-बडे, स्त्री-पुरुष सब चलते, बैठते, खाते-पीते, खेलते, सब कुछ करते, यह विचार-चिंतन करते ही रहे और अैसा करते करते निर्दोष नीद लेनेवाले बन जायं तो क्या ही अच्छा हो! वह सत्यरूप परमेश्वर मेरे लिअे रत्न-चिंतामणि (मनचाहा देनेवाला तिलस्माती रत्न) साबित हुआ है; हम सबके लिअे वैसा ही साबित हो।

---

१ मिसालों। २. गौर।

२

अहिंसा

ता २९-७-'३०
मगल-प्रभात

सत्यका, अहिंसाका रास्ता जितना सीधा है अुतना ही सकरा – तग है, तलवारकी धार पर चलने जैसा है। नट लोग जिस डोरी पर अेक निगाह रखकर चल सकते है अुससे भी सत्य, अहिंसाकी डोरी पतली है। जरासी गफलत हुअी कि नीचे गिरे ही समझो। छन-छनकी साधना[1] से ही अुसके दर्शन हो सकते है।

पर सत्यके पूरे दर्शन तो अिस देहसे नामुमकिन है। अुसकी तो सिर्फ कल्पना ही की जा सकती है। छनजीवी[2] देहके जरिये शाश्वत[3] धर्मका साक्षात्कार — दर्शन संभव नही। अिसलिअे आखिरकार श्रद्धा[4]का अुपयोग तो करना ही पडता है।

अिसीलिअे जिज्ञासु—जाननेकी अिच्छा रखनेवाले—ने अहिंसा पायी। मेरी राहमें जो मुसीबतें आये अुन्हें मैं झेलू या अुनके लिअे जितना नाश[5] करना पडे वह करता जाअू और अपना रास्ता तय करूं? अैसा सवाल जिज्ञासुके सामने पैदा हुआ। अगर वह नाश करता

१ तपस्या, रियाज। २. क्षणिक। ३. हमेशाके। ४. अकीदा, अेतकाद। ५ दूसरेकी तबाही।

चला जाय तो वह मार्ग तय नहीं करता, लेकिन अ
या वही रहता है अैसा अुसने देखा। अगर मुसीबतें झेल
है तो वह आगे बढता है । पहले ही नाशके वक्त अुस
देखा कि जिस सत्यको वह ढूढता है वह बाहर नहीं, बल्कि
अुसके भीतर है। अिसलिअे वह ज्यों ज्यों नाश करता
चला जाता है, त्यों त्यों पिछड़ता जाता है, सत्यसे दूर
हटता जाता है ।

हमे चोर सताते हैं तब अुससे बचनेके लिअे हम
अुन्हे सजा देते हैं। अुस छन वे भाग ज़रूर जाते हैं, लेकिन
दूसरी जगह डाका डालते हैं । लेकिन वह दूसरी जगह
भी हमारी ही है, अिसलिअे हम तो अंधेरी गलीमें
टकराये । चोरोका अुपद्रव[१] तो बढता ही जाता है
क्योंकि अुन्होंने तो चोरीको अपना पेशा मान लिया
है । हम देखते हैं कि अिससे बेहतर तो यह है कि
चोरोंका अुपद्रव बरदाश्त किया जाय; अैसा करनेसे
चोरोंको समझ आयेगी । अितना सहन करने पर हम
देखते हैं कि चोर कोअी हमसे अलग नही हैं । हमारे
लिअे तो सब सगे हैं, मित्र–दोस्त हैं । अुनको सज़ा
नही दी जा सकती । लेकिन अुपद्रव सहते जाना ही
काफ़ी नही है । अुसमें से तो कायरता[२] पैदा होती है।
अिसलिअे हम और अेक विशेष[३] धर्म[४] महसूस करते हैं।
चोर अगर हमारे भाअीबन्द हों तो वह भावना अुनमें भी
पैदा करनी चाहिये । अिसलिअे अुन्हें अपनानेके तरीके

१. सताना। २. बुज़दिली। ३. ख़ास । ४. फ़र्ज़ ।

ढनेकी हमे जरूरी तकलीफ अुठानी चाहिये । यह है
हिंसाकी राह । अिसमे ज्यादा और ज्यादा दुःख न्योतनेकी
ो बात आती है, अटूट धीरज सीखनेकी बात आती है ।
ौर अगर वह (धीरज) हममे रहा तो आखिर चोर
ाहूकार बनता है, हमे सत्यका ज्यादा साफ दर्शन होता
ै । अिस तरह हम दुनियाको दोस्त बनाना सीखते है,
ीश्वरकी, सत्यकी महिमा[1] हम ज्यादा महसूस करते
ै; कठिनाअियां झेलने पर भी हमारी शाति, हमारा
ुख बढता है; हममें साहस, दिलेरी और हिम्मत बढती
ै; हम शाश्वत–लाफानी और अशाश्वत–फानी का
भेद ज्यादा समझने लगते है, करने लायक और न करने-
लायकको पहचानना हमे आता है । हमारा अभिमान[2] गल
जाता है, नम्रता बढ़ती है; परिग्रह[3] अपने-आप घट जाता
है; और तनमे भरा हुआ मैल सदा घटता जाता है ।

यह अहिंसा, आज हम जिसे मोटे तौर पर समझते है, सिर्फ वही नही है । किसीको कभी नही मारना, यह तो अहिंसा है ही । तमाम खराब विचार हिंसा है । जल्दबाजी हिंसा है । झूठ बोलना हिंसा है । द्वेष–वैर–डाह हिंसा है । किसीका बुरा चाहना हिंसा है । जिसकी जगतको जरूरत है अुस पर कब्जा रखना भी हिंसा है । लेकिन जो कुछ हम खाते है वह जगतके लिअे जरूरी है । जहा हम खडे है वहा सैकड़ों सूक्ष्म[4] जीव पड़े है और दुखी होते है । वह जगह अुनकी है । तो क्या

१. बड़ाअी । २. मुर्री । ३. जमा रखनेकी आदत । ४. बारीक ।

हम आत्महत्या[1] करें? तो भी छुटकारा नहीं होता। विचारमें हम शरीरके तमाम लगाव छोड़ दें, तो शरीर हमें छोड़ेगा। यह अमूर्छित[2] स्वरूप सत्यनारायण यह दर्शन अधीरता[3]से हो ही नहीं सकता। तन नहीं है, वह तो (दूसरेको देनेके लिअे मिली हुअी) चीज है, अैसा समझ कर अुसका जो अुपयोग हो करके हम अपनी राह तय करें।

मुझे लिखना तो था आसान ढंगसे, लेकिन गया मुश्किल। फिर भी जिसने अहिंसाके बारेमें भी सोचा होगा, अुसको यह समझनेमें दिक्कत होनी चाहिये।

अितना सच जान ले: बगैर अहिंसाके सत्यकी नामुमकिन है। अहिंसा और सत्य अैसे ओतप्रोत — यानेकी तरह अेक-दूसरेसे मिले हुअे — हैं, जैसे सिक्केके रुख या चिकनी चकतीके दो पहलू। अुसमें अुलटा कौन और सीधा कौनसा? फिर भी अहिंसाको हम साधन जरिया मानें और सत्यको साध्य यानी मकसद। साधन हम बसकी बात है, अिसलिअे अहिंसा परम धर्म हुअी और परमेश्वर हुआ। साधनकी फिक्र हम करते रहेंगे, तो के दर्शन किसी न किसी दिन जरूर करेंगे। निश्चय किया तो जग जीते। हमारे मार्गमें चाहे जो नयें, अूपरी निगाहसे देखने पर हमारी चाहे जितनी हार

१ खुदकुशी। २ नाकाफिल। ३. बेसब्री।

होती हुअी दिखाअी दे, तो भी हम विश्वास[1] को न छोड़ते हुअे अेक ही मंत्रका जाप करें कि सत्य है। वही है। वही अेक परमेश्वर है। अुसका साक्षात्कार–दीदार करनेका अेक ही मार्ग, अेक ही साधन अहिंसा है, अुसे मैं कभी नहीं छोड़ूंगा। जिस सत्यरूप परमेश्वरके नामसे यह प्रतिज्ञा की है, वह अुसे निभानेका बल दे।

३

ब्रह्मचर्य

ता. ५–८–'३०, य. मं.
मंगल-प्रभात

हमारे व्रतोंमें तीसरा व्रत ब्रह्मचर्यका है। हकीकतमें और सब व्रत अेक सत्यके व्रतसे ही निकलते हैं और अुसीके वास्ते हैं। जिस मनुष्यने सत्यको पसंद किया है, जो अुसीकी अुपासना (भक्ति) करता है, वह अगर अुसे छोड़कर किसी और चीजकी आराधना करता है तो व्यभिचारी[2] साबित होता है। तब फिर विकारकी आराधना तो हो ही कैसे सकती है? जिसकी सारी प्रवृत्ति, सारा काम सत्यके दर्शनके लिअे है, वह औलाद पैदा करनेके या घर-संसार, कुटुंब-कबीला चलानेके काममें कैसे पड़ सकता है? भोग-विलाससे किसीने सत्यको पाया हो अैसी आज तक अेक भी मिसाल हमारे सामने नहीं है।

---

१. यकीन। २. बेवफा।

दे सकेगा । आज तो अिस प्रयोग[1]की सफलता[2] साबित हो चुकी है अैसा कह सकते हैं । विवाहित स्त्री-पुरुष अेक-दूसरेको भाअी-बहन समझने लगे तो सारे जंजालसे छूट जाते हैं । दुनियाकी तमाम औरतें बहनें हैं, मातायें हैं, बेटियां हैं, यह खयाल ही आदमीको अेकदम अूंचा ले जानेवाला है, बन्धन[3]से मुक्ति[4] देनेवाला हो जाता है । अिसमें पति-पत्नी[5] कुछ भी खोते नहीं हैं, बल्कि अपनी पूंजी बढ़ाते हैं, कुटुम्ब बढ़ाते हैं, और विकार-रूपी मैलको निकाल डालनेसे प्रेम भी बढ़ाते हैं । विकारके न रहनेसे अेक-दूसरेकी सेवा बेहतर हो सकती है, आपसके झगड़ेके मौके कम होते हैं । जहां स्वार्थी,[6] अेकांगी[7] प्रेम होता है, वहां झगड़ेको ज्यादा स्थान रहता है ।

अूपरकी प्रधान[8] बात सोच लेनेके बाद और अुसके दिलमें जम जानेके बाद ब्रह्मचर्यमें होनेवाले शरीरके लाभ, वीर्य[9]-लाभ वगैरा बहुत गौण हो जाते हैं । अिरादतन् भोग-विलासके लिअे वीर्यको गवाना और शरीरको निचोना यह कितनी बेवकूफी है ? वीर्यका अुपयोग[10] दोनोंकी शरीर और मनकी शक्ति बढ़ानेके लिअे है । विषय-भोगमें[11] अुसका अिस्तेमाल करना अुसका बहुत बड़ा दुरुपयोग[12] है, और अिसलिअे यह बहुतसी बीमारियोंका मूल हो जाता है ।

---

१. आजमाअिश । २. कामयाबी । ३. कैद । ४. आज़ादी । ५. शौहर-बीवी । ६. खुदगर्ज़ी । ७. अिकतरफा । ८. अव्वल । ९. मनी । १०. अिस्तेमाल । ११. अैश व अिशरतमें । १२. बुरा अिस्तेमाल ।

अैसा ब्रह्मचर्य मन, वचन और तनसे बरतनेका होना है। तमाम व्रतोंका अैसा ही समझना चाहिये। जो शरीरको काबूमें रखता है, लेकिन मनसे विकारको पोसता रहता है, वह मूढ[1] और मिथ्याचारी[2] है, अैसा गीतामें हमने पढा है; सभीने अुसका अनुभव किया है। मनको विकारवाला रहने देना और शरीरको दबानेकी कोशिश करना असमें नुकसान ही है। जहां मन है वहां शरीर आखिर घसिटे बिना रहेगा ही नहीं। यहां अेक भेद[3] समझ लेना ज़रूरी है। मनको विकारवश होने देना अेक बात है; मन अपने-आप, बगैर अिच्छाके, जबरन् विकारवाला हो जाय या हुआ करे यह दूसरी बात है। अुस विकारमें हम मददगार न हों तो आखिर हमारी जीत है ही। यह हम छन-छन अनुभव करते हैं कि शरीर काबूमें रहता है, लेकिन मन नहीं रहता। असलिअे शरीरको तुरन्त बसमें करके हम मनको बसमें करनेकी हमेशा कोशिश करते रहें, तो हम (अपना) फर्ज अदा कर चुके। मनके बसमें हुअे कि शरीर और मनका झगड़ा शुरू हुआ, मिथ्याचारका आरभ हुआ। जब तक मनके विकारको हम दबाते रहेंगे, तब तक दोनों साथ साथ जायेंगे अैसा कह सकते हैं।

अिस ब्रह्मचर्यका पालन बहुत मुश्किल, लगभग नामुमकिन माना गया है। अुसके कारण ढूढने पर पता चलता है कि ब्रह्मचर्यका तग, संकुचित अर्थ किया गया

---

१. मूरख। २. ढोंगी। ३ फर्क।

है । जनन-अिन्द्रिय (लिंग, योनि) के विकारों पर काबू ही ब्रह्मचर्यका पालन है असा माना गया है । मुझे लगता है कि यह अधूरी और गलत व्याख्या[1] है । तमाम विषयों[2] पर रोक, काबू ही ब्रह्मचर्य है । जो दूसरी अिन्द्रियोंको– हवासोंको–जहां तहां भटकने देता है और अेक ही अिन्द्रियको रोकनेकी कोशिश करता है, वह निकम्मी कोशिश करता है, अिसमें क्या शक है? कानोंसे विकारकी बातें सुने, आंखोंसे विकार पैदा करनेवाली चीज़ें देखे, जीभसे विकारोंको तेज करनेवाली चीज़ें स्वादसे[3] खाय, हाथसे विकारोंको तेज करनेवाली वस्तुओंको छुअे और फिर भी जनन-अिन्द्रियको रोकनेका अिरादा कोअी रखे, तो यह आगमें हाथ डाल कर न जलनेकी कोशिश करने जैसा होगा । अिसलिअे जो जनन-अिन्द्रियको रोकनेकी ठान ले, अुसको तमाम अिन्द्रियोंको विकारोंसे रोकनेकी ठान ही लेनी चाहिये । ब्रह्मचर्यकी तंग व्याख्यासे नुकसान हुआ है, असा मुझे हमेशा लगा है । मेरी तो पक्की राय है और मेरा तजरबा भी है कि अगर हम सब अिन्द्रियोंको अेक साथ बसमें लानेकी आदत डालें, तो जनन-अिन्द्रियको बसमें लानेकी कोशिश तुरन्त सफल[4] होगी । अिसमें मुख्य चीज स्वाद[5]की अिन्द्रिय है, और अिसीलिअे अुसके संयमको हमने अलग स्थान दिया है । अुसके बारेमें अिसके बाद सोचेंगे ।

---

१ तशरीह । २. अरमान । ३. चाखने । ४. कामयाब । ५. ज़बान, रसना ।

ब्रह्मचर्यका मूल अर्थ सब याद रखें; ब्रह्मचर्य यानी ब्रह्मकी — सत्यकी — शोधमें चर्या यानी अससे मुताल्लिक आचार-बरताव। अिस मूल अर्थमें से सब अिन्द्रियोंका संयम[1] यह विशेष[2] अर्थ निकलता है। सिर्फ जनन-अिन्द्रियका संयम अैसा अधूरा अर्थ तो हम भूल ही जायं।

४

अस्वाद

ता. १२-८-'३०
मंगल-प्रभात

ब्रह्मचर्यके साथ बहुत नजदीकका सम्बन्ध रखनेवाला यह व्रत है। मेरा अनुभव है कि अगर मनुष्य अिस व्रतमें पार अुतर सके, तो ब्रह्मचर्य यानी जनन-अिन्द्रियका संयम बिलकुल सहल हो जाय। लेकिन साधारण तौर पर अिसे व्रतोंमें अलग स्थान नहीं दिया जाता। स्वादको बड़े बड़े मुनिवर भी जीत नहीं सके, अिसलिअे अुस व्रतको अलग स्थान नहीं मिला। यह तो सिर्फ मेरा अनुमान—अन्दाजा है। अैसा हो या न हो, हमने अिस व्रतको अलग स्थान दिया है, अिसलिअे अिसका विचार अलगसे कर लेना ठीक होगा।

अस्वाद यानी स्वाद न लेना। स्वाद यानी रस—मजा। जैसे दवा खाते वक्त वह जायकेदार है या नहीं

---

१. काबू। २. खास।

अिसका खयाल न करते हुअे शरीरको अुसकी जरूरत है अैसा समझकर अुसकी मात्रामें[1] ही हम खाते हैं, अुसी तरह अन्न[2]का समझना चाहिये। अन्न यानी खाने लायक तमाम चीजें। अिसलिअे दूध और फल भी अिसमें आ जाते हैं। जैसे दवा थोडी मात्रामें ली हो तो असर नहीं करती या कम असर करती है और ज्यादा ली हो तो नुकसान करती है, अुसी तरह अन्नका भी है। अिसलिअे कोअी भी चीज सिर्फ स्वादके लिअे चखना व्रतका भंग है। जायकेदार लगनेवाली चीज ज्यादा खाना यह तो आसानीसे व्रतको तोडना हुआ। अिस परसे हम समझ सकते हैं कि किसी चीजका स्वाद बढाने या बदलनेके लिअे या अस्वाद[3] मिटानेके लिअे नमक मिलाना भी व्रत-भंग है। लेकिन खुराकमें अमुक प्रमाण[4]में नमककी जरूरत है अैसा हम जानते हैं और अिसलिअे अुसमें नमक डाले तो अैसा करनेमें व्रतका भंग नहीं है। शरीरके पोषण[5]के लिअे जरूरत न हो, फिर भी मनको ठगनेके लिअे 'जरूरत है' अैसा कहकर कुछ चीज और डालना यह तो मिथ्याचार—झूठा बरताव हुआ।

अिस तरह सोचने पर हम देखेंगे कि जो अनेक चीजें हम लेते हैं, वे शरीरकी परवरिशके लिअे जरूरी न होनेके कारण छोड़ने लायक होती हैं। और यों अनगिनत वस्तुओंका त्याग जिसके लिअे कुदरती हो जाय, अुसके

१. मिकदारमें। २. खुराक। ३. बेमज़गी। ४. मिकदार। ५. परवरिश।

तमाम विकार शान्त हो जाते हैं । 'अेक हंडिया तेरह चीजें मागती है' (अेक तोलडी तेर वानां मागे), 'पेट वेगार करवाता है' (पेट करावे वेठ), 'पेट नाच नचाता है' (पेट वाजां वगडावे) — अिन वचनोंमें बहुत सार है । अिस बारेमें अितना कम खयाल किया गया है कि अस्वाद-व्रतकी निगाहसे खुराककी पसंदगी लगभग नामुमकिन हो गअी है । और बचपनसे ही मां-बाप गलत दुलार करके अनेक तरहके स्वाद बच्चोंको कराकर अुनके शरीरको बिगाड़ डालते हैं और जीभको कुतिया बना डालते हैं, जिससे बड़े होने पर लोग शरीरसे रोगी और स्वादकी निगाहसे बड़े विकारी देखनेमें आते हैं । अिसके कड़वे नतीजे हम पग-पग पर महसूस करते हैं । हम बहुत खर्चमें पड़ जाते हैं, वैद-डाक्टरोंके दर पर जाते रहते हैं, और शरीर तथा अिन्द्रियोंको वसमें रखनेके बजाय अुनके गुलाम होकर पगु—अपाहिज जैसे हो जाते हैं । अेक तजरबेकार वैदका वचन है कि जगतमें अुसने अेक भी निरोगी—तंदुरुस्त आदमी नहीं देखा । जरा भी स्वाद किया कि शरीर भ्रष्ट हुआ, बिगड़ा और तुरन्त अुस शरीरके लिअे अुपवास[1] की ज़रूरत पैदा हुअी ।

अिस विचारधारासे किसीको घबरानेकी ज़रूरत नहीं है । अस्वाद-व्रतसे डरकर अुसे छोड़नेकी भी ज़रूरत नहीं है । जब हम कोअी व्रत लेते हैं तो अुसका मतलब यह नहीं कि तभीसे हम अुसे पूरा-पूरा निभाने लग गये । व्रत लेना यानी अुसको पूरा-पूरा निभानेकी अीमानदारीसे

१. फाका ।

मन, वचन और कर्मसे मरने तक पक्की कोशिश करना। कोअी व्रत मुश्किल है असलिअे अुसकी व्याख्या[1]को ढीला करके हम मनको धोखा न दे। अपने सुभीतेके लिअे आदर्श[2]को नीचे लानेमें असत्य-झूठ (भरा) है, हमारी गिरावट है। मकसदको स्वतंत्र रूपसे[3] समझकर, वह कितना ही मुश्किल क्यों न हो, वहां तक पहुचनेकी जी-जानसे कोशिश करना परम अर्थ है — पुरुषार्थ[4] है। [पुरुष शब्दका अर्थ सिर्फ नर न करके मूल अर्थ करना चाहिये। पुरमें यानी शरीरमें रहता है वह पुरुष। अैसा अर्थ करनेसे पुरुषार्थ शब्दका अिस्तेमाल नर-नारी दोनोंके लिअे हो सकता है।] महाव्रतोंका तीनों काल (भूत, वर्तमान, भविष्य) में पूरा-पूरा पालन करनेके लिअे जो समर्थ[5] है अुसे जगतमें कुछ भी करनेको बाकी नहीं रहता; वह भगवान है, वह मुक्त है — आजाद है। हम तो अल्प,[6] मुक्तिकी अिच्छा रखनेवाले (मुमुक्षु), जाननेकी अिच्छा रखनेवाले (जिज्ञासु), सत्यका आग्रह रखनेवाले — सच्चाअी पर जोर देनेवाले — और अुसकी खोज करनेवाले जीव हैं। असलिअे गीताकी भाषामें धीरे-धीरे लेकिन अतंद्रित[7] रह कर कोशिश करते रहें। अैसा करेंगे तो किसी दिन प्रभुकी कृपा, अुसके प्रसादके लायक हो जायेंगे और तब हमारे तमाम रस, भोगकी लालसायें जल जायेंगी। 4843

---

१. तशरीह। २. मक़सद। ३. अलगसे। ४. मर्दानी कोशिश। ५. ताक़तवर। ६. नाचीज़। ७. नाग़ाफ़िल।

अस्वाद-व्रतकी अहमियत अगर हम समझे हों तो
पालनके लिअे हम नयी कोशिश करें। अुसके लिअे
घटे खानेके ही विचार करते रहनेकी जरूरत नहीं है
सिर्फ खबरदारी, जागृतिकी बहुत जरूरत रहती है।
करनेसे थोड़े ही समयमें यह मालूम हो जायगा कि
कहां स्वाद करते हैं और कहां शरीरकी परवरिशके लि
खाते हैं। यह जब मालूम हो जाय, तब दृढ़तासे
मजबूतीसे हम स्वाद कम करते ही जायं। अिस नजरसे सोचें
पर आश्रममें सबके लिअे बनी हुअी रसोअी, जो अस्वाद
भावनासे बनी हुअी होती है, बहुत मददगार होती है।
वहां क्या खायेंगे या क्या पकायेंगे अिसका हमें विचार नहीं
करना पड़ता; लेकिन जो खाना पका हुआ हो और हमारे
लिअे तजने लायक न हो अुसे ओिश्वरकी कृपा समझकर,
मनमें भी अुसकी टीका-टिप्पणी[1] न करते हुअे संतोषके
साथ शरीरके लिअे जितना जरूरी हो अुतना खाकर
अुठ जायें। अैसा करनेवाला आसानीसे अस्वाद-व्रतका पालन
करता है। सबकी रसोअी बनानेवाले हमारा बोझ हलका
करते हैं। वे हमारे व्रतके रखवाले बनते हैं। वे स्वाद
करानेकी दृष्टिसे कुछ भी नहीं बनायेंगे, सिर्फ समाजके
शरीरके पोषणके लिअे ही खाना पकायेंगे। सचमुच तो
आ... ...में आगकी जरूरत कमसे कम या बिलकुल
... सूरजके रूपमें महाअग्नि जो चीजें पकाती
...र खाने लायक चीजें हमें खोज निकालनी

[1] ...

चाहिये। और अिस तरह सोचने पर मनुष्यप्राणी[1] सिर्फ फल खानेवाला है अैसा साबित होता है। लेकिन यहां अितनी गहराअीमें जानेकी जरूरत नहीं है। यहां तो अस्वाद-व्रत क्या है, अुसमें कौन कौनसी मुसीबतें हैं और नहीं हैं, और अुसका ब्रह्मचर्यके पालनसे कितना नजदीकका सम्बन्ध है यही सोचना था।

अितना जच जानेके बाद सब अपनी शक्तिके मुताबिक अिस व्रतमें पार अुतरनेकी शुभ कोशिश करें।

५
अस्तेय (चोरी न करना)

ता. १९-८-३० य. म.

मंगल प्रभात

अब हम अस्तेय-व्रत पर आते हैं। गहराअीसे जानेसे हम देखेंगे कि सब व्रत सत्य और अहिंसा या सत्यके पेटमें समाये हुअे हैं। ये अिस तरह दिखाये जा सकते हैं

१ अिन्सान।
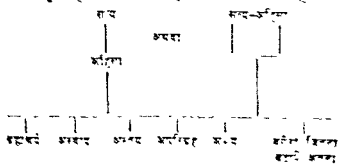
या तो सत्यमें से अहिंसा निकलती है अैसा मानें या
-अहिंसाकी जोड़ी मानें। दोनों अेक ही चीज हैं; फि
मेरा मन पहलेकी ओर झुकता है। और आखि
लत तो जोडीसे — द्वन्द्वसे — परे है। परम सत्य अकेला
कता है। सत्य साध्य[1] है, अहिंसा साधन[2] है। अहिंसा
या है यह हम जानते हैं; अुसका पालन मुश्किल है।
त्यका तो हम सिर्फ कुछ अंश[3] ही जानते हैं; अुसे पूरं
तरह जानना देहधारीके लिअे कठिन है, जैसे कि अहिंसाका
पूरा-पूरा पालन देहधारीके लिअे कठिन है।

अस्तेयके मानी हैं चोरी न करना। कोअी अैसा नहीं
कहेगा कि जो चोरी करता है वह सत्यको जानता है य
प्रेमधर्मका पालन करता है। फिर भी चोरीका थोड़ा-बहुत
कसूर हम सब जाने-अनजाने करते ही हैं। बग़ैर
अिजाजतके किसीका कुछ लेना यह तो चोरी है ही।
लेकिन जिसे अपना माना है अुसकी भी चोरी अिन्सान
करता है — जैसे कोअी बाप, अपने बच्चोंके न जानते हुअे,
अुनको न जतानेके अिरादेसे, चोरी-चुपके कोअी चीज
खा लेता है। आश्रमका भंडार[4] हम सबका है अैसा
कह सकते हैं, परन्तु अुसमें से चोरी-चुपके कोअी गुड़की
डली भी ले ले तो वह चोर है। अेक बालक दूसरेके
कलम लेता है तो वह चोरी करता है। चाहे दूसर
आदमी जानता भी हो, लेकिन अुसकी अिजाजतके बग़ैर
अुसकी कोअी चीज लेना यह भी चोरी है। फलां चीज

१. मक़सद। २. ज़रिया। ३. हिस्सा। ४. रसदख़ाना।

किसीकी भी नही है, अैसा मानकर अुसे लेना भी चोरी है; यानी रास्तेमें पडी मिली हुअी वस्तुके हम मालिक नही हैं, अुस प्रदेश[१]का राजा या तंत्र[२] अुसका मालिक है। आश्रमके नज़दीक मिली हुअी कोअी भी चीज़ आश्रमके मंत्रीके सुपुर्द करनी चाहिये। अगर वह चीज़ आश्रमकी न हो, तो मंत्री अुसे पुलिसके हवाले कर दे।

यहां तक तो समझना प्रमाणमें[३] सहल ही है। लेकिन अस्तेय अिससे बहुत आगे जाता है। किसी अेक चीजकी हमें जरूरत नही है, फिर भी वह जिसके कब्जेमें हो अुससे, चाहे अुसकी अिजाज़त लेकर ही, लेना चोरी है। जिसकी जरूरत न हो अैसी अेक भी चीज़ हमें नही लेनी चाहिये। अैसी चोरी जगतमें ज्यादातर खानेकी चीजोंके बारेमें होती है। मुझे अमुक[४] फलकी हाजत नही है, फिर भी मैं अुसे खाता हूं, या चाहिये अुससे ज्यादा खाता हूं, तो वह चोरी है। सचमुच अपनी हाजत कितनी है यह अिन्सान हमेशा जानता नही है, और लगभग हम सब होनी चाहिये अुससे ज्यादा अपनी हाजतें बना रखते हैं। अिससे हम अनजाने चोर बन जाते हैं। विचार करनेसे हम देखेंगे कि अपनी बहुतसी हाजतें हम कम कर सकते हैं। अस्तेयका व्रत पालनेवाला अेकके बाद अेक अपनी हाजतें कम करता जायेगा। अिस जगतमें बहुतसी कंगाली अस्तेयके भंगसे पैदा हुअी है।

---

१. अिलाका। २. हुकूमत। ३. मुकाबलेमें। ४. फला।

अूपर जो बताअी गअी वे सब बाहरी या
चोरियां हुअी । अिससे भी बारीक–सूक्ष्म और
नीचे गिरानेवाली या रखनेवाली चोरी मानसिक,
जानेवाली है । मनसे हम किसीकी चीज पानेकी
करें या अुस पर बुरी नजर डालें यह चोरी है।
हों या बच्चे हों, अच्छी चीज़ देखकर ललचायें तो
मनकी चोरी है । अुपवास[1] करनेवाला शरीरसे तो
खाये, लेकिन दूसरेको खाते देखकर मनसे स्वादका मज़ा ले
तो वह चोरी करता है और अपने अुपवासका भंग क
है । अुपवास रखनेवाला जो आदमी अुपवास छोड़ते
खानेके विचार किया करता है, वह अस्तेय और
भंग करता है अैसा कहा जा सकता है । अस्तेय-व्र
पालनेवालेको भविष्यमें पानेकी चीजके विचारोके भंवरमें
नही पड़ना चाहिये । बहुतसी चोरियोंके मूलमें अैसी
बद-दियानत पाअी जायेगी । आज जो चीज़ सिर्फ
ही है अुसे पानेके लिअे कल हम भले-बुरे अुपाय[2] काममें
लाना शुरू कर देंगे ।

और जैसे वस्तुकी चोरी होती है, वैसे विचारकी
चोरी भी होती है । अमुक अच्छा विचार अपने मनमें
न अुठा हो, फिर भी खुद ही ने सबसे पहले वह विचार
किया अैसा जो अहंकार[3]से कहता है, वह विचारकी चोरी
करता है । अैसी चोरी बहुतसे विद्वानोंने[4] भी दुनियामें
की है और आज भी चल रही है । खयाल

१. रोज़ा । २ तरीक़े । ३. खुदी । ४. आलिमोंने ।

ोजिये कि मैंने आश्रममें अेक नयी किस्मका चरखा देखा।
मा चरखा मैं आश्रममें बनाअू और फिर कहूं कि यह
ारी खोज है, तो अिसमें मैं साफ तौर पर दूसरेकी
ोजकी चोरी करता हू, झूठ तो बरतता ही हू ।

अिसलिअे अस्तेय-व्रतका पालन करनेवालेको बहुत नम्र, बहुत विचारशील[1], बहुत खबरदार और बहुत सादा रहना पडता है ।

६

अपरिग्रह (जमा न रखना)

ता° २६-८-'३०, य म.
मगल-प्रभात

अपरिग्रहका सम्बन्ध अस्तेयसे है। जो असलमें चुराया नही है अुसे जरूरत न होने पर भी जमा करनेसे वह चोरीका माल-सा बन जाता है। परिग्रहके मानी है सचय यानी अिकट्ठा करना। सत्यकी खोज करनेवाला, अहिंसा बरतनेवाला परिग्रह नही कर सकता । परमात्मा परिग्रह नही करता । अपने लिअे जरूरी चीज वह रोजकी रोज पैदा करता है। अिसलिअे अगर हम अुस पर भरोसा रखते हैं, तो हमें समझना चाहिये कि हमारी जरूरतकी चीजें वह रोजाना देता है, देगा । औलियाओका, भक्तोंका यही अनुभव है। रोजकी जरूरत जितना ही रोज पैदा करनेका

१. सोच-विचार करनेवाला।

अीश्वरका नियम हम नही जानते, या जानते हुअे भी पालते नही। अिसलिअे जगतमें असमानता और अुसमें से पैदा होनेवाले दुःख हम भुगतते हैं। अमीरके यहां अुसको न चाहिये वैसी चीज़ें भरी पड़ी होती हैं, लापरवाहीसे खो जाती हैं, बिगड़ जाती हैं; जब कि अिन्ही चीज़ोंकी कमीके कारण करोड़ो लोग भटकते हैं, भूखों मरते हैं, ठंडसे ठिठुर जाते हैं। सब अगर अपनी जरूरतकी चीजोंका ही संग्रह करें, तो किसीको तंगी महसूस न हो और सबको संतोष हो। आज तो दोनों (तंगी) महसूस करते हैं। करोड़पति भी अरबपति होना चाहता है, फिर भी अुसको संतोष नही होता। कंगाल करोड़पति होना चाहता है; कंगालको भरपेट ही मिलनेसे संतोष होता हो असा नही देखा जाता। फिर भी अुसे भरपेट पानेका हक है, और अुसे अुतना पानेवाला बनाना समाजका फर्ज़ है। अिसलिअे अुस (ग़रीब) के और अपने संतोषके खातिर अमीरको पहल करनी चाहिये। अगर वह अपना बहुत ज्यादा परिग्रह छोड़े तो कंगालको अपनी जरूरतका आसानीसे मिल जाय और दोनों पक्ष[1] संतोषका सबक सीखें। आत्यंतिक[2] आदर्श अपरिग्रह तो जो मन और कर्ममें दिगंबर है अुसीका हो सकता है। मतलब कि वह पंछीकी तरह बगैर घरके, बगैर कपड़ेके और बगैर अन्नके घूमता-फिरता रहेगा। अन्न तो जो अुसे रोज लगेगा वह भगवान देता रहेगा। अिस अवधूत[3] दशाको बिरला ही आदमी

१. गिरोह। २ हद दरजेका। ३. मस्ताना, फकीराना।

पहुंच सकेगा। हम मामूली दरजेके सत्याग्रही, जिज्ञासु (जाननेकी अिच्छा रखनेवाले) लोग आदर्श[1]को खयालमें रखकर जैसा बन पड़े, हमेशा अपने परिग्रहकी जांच करते रहें और अुसे कम करते जायें। सही सुधार, सच्ची सभ्यता[2]का लक्षण[3] परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच-समझकर और अपनी अिच्छासे अुसे कम करना है। ज्यों ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं, त्यों त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता जाता है, सेवाकी शक्ति बढ़ती जाती है। अिस तरह सोचने पर और बरतने पर हम देखेंगे कि आश्रममें हम बहुत-सा संग्रह अैसा करते हैं, जिसकी जरूरत साबित नहीं कर सकेंगे, और अैसे बिन-जरूरी परिग्रहसे पड़ोसीको चोरी करनेके लालचमें फंसाते हैं। अभ्याससे, आदत डालनेसे आदमी अपनी हाजतें घटा सकता है; और ज्यों ज्यों अुन्हें घटाता जाता है त्यों त्यों वह सुखी, शान्त और सब तरहसे तन्दुरुस्त होता जाता है। सहज सत्यकी यानी आत्माकी नजरसे सोचने पर शरीर भी परिग्रह है। भोगकी अिच्छासे हमने शरीरका आवरण[4] पैदा किया है और अुसे हम टिकाये रखते हैं। अगर भोगकी अिच्छा बिलकुल कम हो जाय, तो शरीरकी हाजत मिट जाय; यानी मनुष्यको नया शरीर लेनेकी जरूरत न रहे। आत्मा सब जगह फैलनेवाली, सर्वव्यापी होनेसे शरीर-रूपी पिंजरेमें क्योंकर बंद होगी? अुस पिंजरेको बनाये रखनेके लिअे बुरा काम क्यों करें?

---

१. नमूना। २. तहज़ीब। ३. निशान। ४. ढक्कन।

औरोंको क्यों मारें? अिस तरह विचार करते हुअे हम आखिरी त्याग तक पहुंच जाते हैं, और जब तक शरीर है तब तक अुसका अुपयोग सिर्फ सेवाके लिअे करना सीखते हैं; यहां तक कि सेवा ही अुसकी असली खुराक हो जाती है। वह खाता है, पीता है, लेटता है, बैठता है, जागता है, सोता है, यह सब सेवाके लिअे ही होता है। अिसमें से पैदा होनेवाला सुख सच्चा सुख है, और अैसा करते हुअे मनुष्य अन्तमें सत्यकी झांकी करता है। हम सब अपने अपने परिग्रहके बारेमें अिसी निगाहसे सोचें।

अितना याद रखने लायक है कि जैसे चीजोंका वैसे ही विचारोंका भी अपरिग्रह होना चाहिये। जो आदमी अपने दिमागमें बेकारका ज्ञान भर रखता है वह परिग्रही है। जो विचार हमें ओीश्वरसे विमुख करते हैं, फेर लेते हैं या ओीश्वरकी ओर नहीं ले जाते, वे सब परिग्रहमें गिने जायेंगे और अिसलिअे छोडने लायक हैं। ज्ञानकी अैसी व्याख्या भगवानने गीताके तेरहवें अध्यायमें दी है। वह अिस मौके पर सोचने लायक है। अमानित्व[1] वगैराको गिना कर भगवानने कह दिया है कि अुनके अलावा जो कुछ है वह सब अज्ञान है। अगर यह सही वचन है — और सही तो है ही — तो आज जो हम बहुत कुछ ज्ञानके नामसे जमा करते हैं . . . ही है और अुससे लाभके बजाय नुकसान होता . . . इससे गिर घूमना है, और आखिर वह खाली हो

१. घमंड न होना।

जाता है; अुससे असंतोष फैलता है और बुराअियां बढ़ती हैं।

अिसमें से कोअी जड़ताका अर्थ कभी न निकाले। हमारा हरअेक पल और छन प्रवृत्तिवाला[1] होना चाहिये। लेकिन यह प्रवृत्ति सात्त्विक हो, सत्यकी ओर ले जानेवाली हो। जिसने सेवाधर्मको अपनाया है वह अेक पलके लिअे भी जड़ दशामें नहीं रह सकता। यहां तो सार-असार[2]का विवेक[3] सीखनेकी बात है। सेवापरायण[4]को यह विवेक आसानीसे हासिल होता है।

७

अभय

ता. २-९-'३०

मंगल-प्रभात

अिसकी गिनती गीताजीके सोलहवें अध्यायमें दैवी सम्पत्‌का जिक्र करते हुअे भगवानने प्रथम की है। यह श्लोककी रचनाकी सुविधाके खातिर है या अभयको पहला स्थान होना चाहिये अिसलिअे है, अिस बहसमें मैं नहीं अुतरूंगा; अैसा निर्णय[5] करनेकी मुझमें लियाकत भी नहीं है। मेरी रायमें अभयको सहज ही पहला स्थान मिला हो तो भी वह अुसके लायक ही है। बिना अभयके

१. कामवाला। २ दल-बेदल। ३. तमीज। ४. सेवामें लगा रहनेवाला। ५ फैसला।

दूसरी संपत्तें नहीं मिलेगी । विना अभयके सत्यकी खोज कैसे हो ? विना अभयके अहिंसाका पालन कैसे हो ? 'हरिनो मारग छे शूरानो, नहि कायरनुं काम जोने' (हरिका मार्ग शूरका है, अुसमें कायरका काम नहीं) । सत्य ही हरि, वही राम, वही नारायण, वही वासुदेव है। कायर यानी डरा हुआ, बुजदिल; शूर यानी भयसे मुक्त, तलवार वगैरासे लैस नहीं । तलवार बहादुरकी निशानी नहीं है, डरकी निशानी है ।

अभयका मतलब है तमाम बाहरी भयोंसे मुक्ति[1] मौतका डर, धन-दौलत लुट जानेका डर, कुटुंब-कबीलेके बारेमें डर, रोगका डर, हथियार चलनेका डर, आबरूका डर, किसीको बुरा लगानेका—चोट पहुंचानेका डर, अिस तरह डरकी फेहरिस्त जितनी बढ़ाना चाहें हम बढ़ा सकते हैं । अेक सिर्फ़ मौतका भय जीता कि सब भयोंको जीत लिया, अैसा आम तौर पर कहा जाता है। लेकिन वह ठीक नहीं लगता । बहुतसे लोग मौतका डर छोड़ देते हैं, फिर भी वे तरह तरहके दुःखोंसे भागते हैं । कुछ लोग खुद मरनेको तैयार होते हैं, लेकिन सगे-सम्बन्धियोंका बिछोह बरदाश्त नहीं कर सकते । कोअी कंजूस यह सब छोड़ देगा, देह भी छोड देगा, लेकिन जमा किया हुआ धन छोड़ते झिझकेगा । कोअी आदमी अपनी मानी हुअी अिज्जत-आबरू बनाये रखनेके लिअे बहुत कुछ स्याह-सफेद[2] करनेको तैयार हो जायेगा और करेगा । कोअी

१ छुटकारा। २. भला-बुरा।

[?]नकी निन्दा[1]के भयसे सीधी राह जानते हुअे भी अुसे [?]ाड़ते हिचकिचायेगा । सत्यकी खोज करनेवालेको अिन सब भयोंको छोड़ बिना चारा नहीं । हरिश्चन्द्रकी तरह तमाम होनेकी अुसकी तैयारी होनी चाहिये । हरिश्चन्द्रकी कथा भले ही मनगढ़त हो, लेकिन अुसमें सब आत्मार्थियों (आत्माका कल्याण चाहनेवालों) का अनुभव भरा हुआ है; अिसलिअे अुस कथाकी कीमत किसी तारीखी[2] कथासे अनन्तगुनी[3] ज्यादा है और हम सबको अुसे अपने पास रखना चाहिये और अुस पर गौर करना चाहिये ।

अभय-व्रतका पूरी तरह पालन करना लगभग नामुमकिन है । तमाम भयोंसे मुक्ति तो वही पा सकता है जिसे आत्माके दर्शन हुअे हों । अभय अमूर्छ[4] दशाकी आखिरी हद[5] है । निश्चय करनेसे,[6] लगातार कोशिश करनेसे और आत्मामें श्रद्धा बढ़नेसे अभयकी मिकदार बढ़ सकती है । मैंने शुरूमें ही कहा है कि हमें बाहरी भयोंसे मुक्ति पानी है । अन्दर जो दुश्मन हैं अुनसे तो डरकर ही चलना है । काम, क्रोध वगैराका भय सच्चा भय है । अुसे जीत लें तो बाहरी भयोंकी परेशानी अपने-आप मिट जायगी । तमाम भय देहको लेकर हैं । अगर देहकी ममता छूटे तो आसानीसे अभय प्राप्त[7] हो जाय । अिस तरह सोचते हुअे [illegible] ारी खयाली पैदावार है ।

३. बेहद । ४ नाकाफिल ।
[illegible]

पैसेमें से, कुटुम्बमें से, शरीरमें से 'मेरा'-पन निकाल दें, तो भय कहां रहा? 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' (अुसे तजकर भोगो) — यह रामबाण वचन है। कुटुम्ब, पैसा, देह ज्योंके त्यों रहें। अुनके बारेमें हमारी कल्पना[1] बदलनी होगी। वे 'हमारे' नहीं हैं, 'मेरे' नहीं हैं। वे ओश्वरके हैं; 'मैं' भी अुसीका हूं; अिस जगतमें 'मेरा' अैसा कुछ है ही नहीं। फिर मुझे भय काहेका? अिसीलिअे अुपनिषद्कारने कहा: 'अुसे तजकर भोगो'। अिसलिअे हम अुसके रखवाले बनें, वह अुसकी रखवालीके लिअे जरूरी सामान और शक्ति हमें देगा। यों हम स्वामी[2] मिटकर सेवक बनें, शून्य जैसे (कुछ नहीं) होकर रहें, तो आसानीसे तमाम भयोंको जीत लेंगे, आसानीसे शांति पायेंगे और सत्यनारायणका दर्शन करेंगे।

१. खयाल। २. मालिक।

८

अस्पृश्यता-निवारण[१]

ता. ९-९-'३०
मगल-प्रभात

यह व्रत भी अस्वाद-व्रतकी तरह नया है और कुछ विचित्र भी लगेगा। वह जितना विचित्र[२] है, अुससे कही ज्यादा जरूरी है। अस्पृश्यता यानी अछूतपन, और अखा भगतने ठीक ही गाया है कि 'आभडछेट अदकेरु अंग' (अछूतपन तो अेक ज्यादा, बिन-जरूरी अंग है, जो छठी अुगलीके समान कामका नही)। यह जहा तहा धर्मके नाम पर या धर्मके बहाने धर्मके काममे रुकावट डालता है और धर्मको बिगाड़ता है। अगर आत्मा अेक ही है, अीश्वर अेक ही है, तो अछूत कोअी नही। जैसे ढेड, भगी अछूत माने जाते हैं, लेकिन अछूत नही हैं, वैसे मुरदा भी अछूत नही है, वह सम्मान और करुणा, अिज्जत और रहमके लायक है। मुरदेको छूकर या तेल लगाकर या अुसकी हजामत कर-कराकर अगर लोग नहाते हैं, तो वह सिर्फ आरोग्य-तदुरुस्तीके खयालसे ही। मुरदेको छूकर या तेल लगाकर अगर कोअी नहाता नही है, तो वह गंदा भले ही कहा जाय, लेकिन वह पातकी नही है, पापी नही है। यों तो भले ही माता बच्चेका मैला अुठाकर जब तक न

१ अछूतपन मिटाना। २. अजीब।

नहाये या हाथ-पैर न धोये तब तक अछूत गिनी जाय, लेकिन बच्चा लाड़ करता हुआ, खेलता हुआ अुसे छू ले तो अुसे (बच्चेको) छूत लगनेवाली नही है, न अुसकी आत्मा मलिन[१] होगी। लेकिन जो नफ़रतके कारण भंगी, ढेड़, चमार वग़ैरा नामसे पहचाना जाता है, वह तो जनमसे अछूत माना जाता है। भले ही अुसने सैंकड़ों साबुनोंसे बरसों तक शरीरको मला हो, भले ही वह वैष्णवकी पोशाक पहनता हो, माला-कंठी पहनता हो, भले ही वह रोज़ गीतापाठ करता हो और लेखकका धन्धा करता हो, तो भी वह अछूत माना जाता है। यों जो धर्म माना जाता है या बरता जाता है, वह धर्म नहीं है, अधर्म है और नाश होने लायक है। अस्पृश्यता-निवारणको व्रतकी जगह देकर हम ज़ाहिर करते हैं कि अछूतपन हिन्दू धर्मका अंग नही है, अितना ही नही बल्कि वह हिन्दू धर्ममें पैठी हुअी अेक सड़न है, वहम है, पाप है, और अुसे मिटाना हरअेक हिन्दूका धर्म है, अुसका परम कर्तव्य[२] है। अिसलिअे जो अुसे पाप मानता है वह अुसका प्रायश्चित्त[३] करे, और कुछ नही तो प्रायश्चित्तके तौर पर ही समझदार हिन्दू अपना धर्म समझ कर हरअेक अछूत माने जानेवाले भाअी या बहनको अपनावे; प्रेमसे और सेवाभावसे अुसे छुअे, छूकर अपनेको पावन[४] हुआ माने, 'अछूतों'के दुःख दूर करे; वे बरसोंसे कुचले गये हैं, अिसलिअे अुनमें अज्ञान जो दोष आ गये हैं अुन्हें धीरजसे दूर करनेमें

१. मैला। २. फ़र्ज़। ३. कफ़्फ़ारा। ४. पाक।

नहाये या हाथ-पैर न धोये तब तक अछूत गिनी जाय, लेकिन बच्चा लाड़ करता हुआ, खेलता हुआ अुसे छू ले तो अुसे (बच्चेको) छूत लगनेवाली नहीं है, न अुसकी आत्मा मलिन[1] होगी। लेकिन जो नफरतके कारण भंगी, ढेड़, चमार वग़ैरा नामसे पहचाना जाता है, वह तो जनमसे अछूत माना जाता है। भले ही अुसने सैकड़ों साबुनोंसे बरसों तक शरीरको मला हो, भले ही वह वैष्णवकी पोशाक पहनता हो, माला-कंठी पहनता हो, भले ही वह रोज़ गीतापाठ करता हो और लेखकका धन्धा करता हो, तो भी वह अछूत माना जाता है। यों जो धर्म माना जाता है या बरता जाता है, वह धर्म नहीं है, अधर्म है और नाश होने लायक है। अस्पृश्यता-निवारणको व्रतकी जगह देकर हम जाहिर करते हैं कि अछूतपन हिन्दू धर्मका अंग नहीं है, अितना ही नहीं बल्कि वह हिन्दू धर्ममें पैठी हुअी अेक सड़न है, वहम है, पाप है, और अुसे मिटाना हरअेक हिन्दूका धर्म है, अुसका परम कर्तव्य[2] है। अिसलिअे जो अुसे पाप मानता है वह अुसका प्रायश्चित्त[3] करे, और कुछ नहीं तो प्रायश्चित्तके तौर पर ही समझदार हिन्दू अपना धर्म समझ कर हरअेक अछूत माने जानेवाले भाअी या बहनको अपनावे; प्रेमसे और सेवाभावसे अुसे छुअे, छूकर अपनेको पावन[4] हुआ माने, 'अछूतों' के दुख दूर करे; वे बरसोंसे कुचले गये हैं, अिसलिअे अुनमें अज्ञान वग़ैरा जो दोष आ गये [illegible] धीरजसे दूर करनेमें

१. मैली। २. फ़र्ज़। [illegible] ४. पाक।

अुनकी मदद करे, और अैसा करनेके लिअे दूसरे हिन्दुओंको समझावे, प्रेरणा दे। अिस निगाहसे अछूतपनको देखने पर, अुसे दूर करनेमे जो दुन्यवी या राजनीतिक[1] नतीजे समाये हुअे हैं, अुन्हे व्रतधारी[2] तुच्छ[3] समझेगा। वह या वैसा नतीजा आये या न आये, फिर भी अछूतपन मिटानेके कामको जिसने अपना व्रत बना रखा है, वह धर्म समझकर अछूत माने जानेवाले लोगोंको अपनायेगा। सत्य वगैराका आचरण करते हुअे हम दुन्यवी नतीजोंका विचार न करे। सत्यका आचरण अुस व्रतधारीके लिअे अेक तरकीब नही है, वह तो अुसकी देहके साथ जडी हुअी चीज़ है, अुसका स्वभाव है; अुसी तरह अस्पृश्यता-निवारण भी अुस व्रतधारीके लिअे तरकीब नही है, अुसका स्वभाव है। अिस व्रतका महत्त्व समझनेके वाद हमें मालूम होगा कि यह अछतपनकी सडन सिर्फ ढेड-भंगी माने जानेवालोके [illegible] समाजमें पैठ गयी है अैसा [illegible] कि वह पहले [illegible] पहाड़का रूप [illegible] है अुसका नाम [illegible]। यह छुआछूत [illegible] फिरकेवालोंके [illegible] भीतर भी घुस [illegible] पालते पालते अपना ही समालने,

[illegible] नाचीज़। ४. फ़िरक़ा।

खुदको ही सहलाने (आंच न आने देने), बचाते फिरने, नहाने-धोने, खाने-पीनेसे फ़ुरसत नहीं पाते, और ओीश्वरको भूल कर ओीश्वरके नामसे खुदको पूजने लग जाते हैं। अिसलिअे अछूतपन मिटानेवाला आदमी सिर्फ़ ढंग: भंगीको अपनाकर संतोष न मानेगा; वह जब तक तमाम जीवोंको अपनेमें नहीं देखता और अपनेको तमाम जीवोंमें नहीं होम देता, नहीं मिटा देता, तब तक शांत होगा ही नहीं। अछूतपन मिटाना यानी तमाम जगतके साथ दोस्ती रखना, अुसका सेवक बनना। यों अस्पृश्यता निवारण और अहिंसाकी जोड़ी बन जाती है और सचमुच है भी। अहिंसाका अर्थ है तमाम जीवोंके लिअे पूरा प्रेम। अछूतपन मिटानेका भी वही अर्थ है। तमाम जीवोंके साथका भेद मिटाना अछूतपन मिटाना है। अिस तरह अछूतपनको देखनेसे वह दोष[1] थोड़ा-बहुत सारे जगतमें फैला हुआ है। यहां हमने अुसका हिन्दू धर्मकी सड़नके रूपमें विचार किया है, क्योंकि अुसने हिन्दू धर्ममें धर्मका स्थान हथिया लिया है, और धर्मके बहाने लाखों या करोड़ोंकी हालत गुलामोंके जैसी कर डाली है।

---

१. खराबी।

९

जात-मेहनत

ता० १६-९-'३०
मंगल-प्रभात

जात-मेहनत तमाम मनुष्योंके लिअे लाजिमी है, यह बात पहले-पहल टॉल्स्टॉयका अेक निबन्ध पढ़कर मेरे मनमें बैठ गअी। यह बात अितनी साफ जाननेके पहले अुस पर अमल तो मैं रस्किनका 'अन्टु दिस लास्ट' (सर्वोदय) पढ़कर तुरन्त करने लग गया था। जात-मेहनत अंग्रेजी शब्द 'ब्रेड लेबर' का तरजुमा है। 'ब्रेड लेबर' का शब्दके मुताबिक अनुवाद है रोटी (के लिअे) मजदूरी। रोटीके लिअे हरअेक मनुष्यको मजदूरी करनी चाहिये, शरीरको (कमरको) झुकाना चाहिये, यह अीश्वरका कानून है। यह मूल खोज टॉल्स्टॉयकी नहीं है लेकिन अुनसे बहुत कम मशहूर रशियन लेखक बोन्डरेफ (T. M. Bondaref) की है। टॉल्स्टॉयने अुसे रोशन किया और अपनाया। अिसकी झांकी मेरी आंखें भगवद्गीताके तीसरे अध्याय[1]में करती हैं। यज्ञ किये बिना जो खाता है वह चोरीका अन्न खाता है, अैसा कठिन शाप[2] यज्ञ नहीं करनेवालोंको दिया गया है। यहां यज्ञका अर्थ जात-मेहनत या रोटी-मजदूरी ही शोभता[3] है और मेरी रायमें यही मुनासिब है। जो

१ यज्ञ। २ सख्त बद्दुआ। ३ फबता।

भी हो, हमारे अिस व्रतका जन्म अिस तरह हुआ है। बुद्धि भी अुस चीजकी ओर हमें ले जाती है। जो मजदूरी नहीं करता अुसे खानेका क्या हक है? बाअिबिल कहती है 'अपनी रोटी तू अपना पसीना बहाकर कमा और खा'। करोड़पति भी अगर अपने पलंग पर लोटता रहे और अुसके मुंहमें कोअी खाना डाले तब खाय, तो वह ज्यादा देर तक खा नहीं सकेगा, अिसमें अुसको मजा भी नहीं आयेगा। अिसलिअे वह कसरत वगैरा करके भूख पैदा करता है और खाता तो है अपने ही हाथ-मुंह हिलाकर। अगर यों किसी न किसी रूपमें अमीरोंको कसरत राव-रंक सबको करनी ही पड़ती है, तो रोटी पैदा करनेकी कसरत ही सब क्यों न करें? यह सवाल कुदरती तौर पर अुठता है। किसानको हवाखोरी या कसरत करनेके लिअे कोअी कहता नहीं है और दुनियाके ९० फीसदीसे भी ज्यादा लोगोंका निर्वाह खेती पर होता है। बाकीके दस फीसदी लोग अगर अिनकी नकल करें तो जगतमें कितना सुख, कितनी शांति और कितनी तन्दुरुस्ती फैल जाये? और अगर खेतीके साथ बुद्धि भी मिले तो खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली बहुतसी कठिनाअियां आसानीसे दूर हो जायेंगी। फिर, अगर जात-मेहनतके निरपवाद कानूनको सब [illegible] मद मिट जाय। आज तो जहां [illegible] भी नहीं थी [illegible] वर्ण-व्यवस्थामें भी है। [illegible] मजदूरका भेद आम और व्यापक [illegible]

भी हो, हमारे अिस व्रतका जन्म अिस तरह हुआ है। वुद्धि भी अुस चीजकी ओर हमें ले जाती है। जो मजदूरी नहीं करता अुसे खानेका क्या हक है? वाअिबिल कहती है: 'अपनी रोटी तू अपना पसीना वहाकर कमा और खा'। करोड़पति भी अगर अपने पलग पर लोटता रहे और अुसके मुंहमे कोअी खाना डाले तव खाय, तो वह ज्यादा देर तक खा नही सकेगा, अिसमें अुसको मजा भी नही आयेगा। अिसलिअे वह कसरत वगैरा करके भूख पैदा करता है और खाता तो है अपने ही हाथ-मुह हिलाकर। अगर यों किसी न किसी रूपमे अगोंकी कसरत राय-रंक सवको करनी ही पडती है, तो रोटी पैदा करनेकी कसरत ही सब क्यों न करें? यह सवाल कुदरती तौर पर अुठता है। किसानको हवाखोरी या कसरत करनेके लिअे कोअी कहता नही है और दुनियाके ९० फीसदीसे भी ज्यादा लोगोंका निवाह खेती पर होता है। वाकीके दस फीसदी लोग अगर अिनकी नकल करें तो जगतमें कितना सुख, कितनी शांति और कितनी तदुरुस्ती फैल जाये? और अगर खेतीके साथ वुद्धि भी मिले तो खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली बहुतसी मुसीवतें आसानीसे दूर हो जायेंगी। फिर अगर अिस जात-मेहनतके निरपवाद[1] क़ानूनको सब मानें, तो अूंच-नीचका भेद मिट जाय। आज तो जहां अूंच-नीचकी बू भी नहीं थी वहा यानी वर्ण-व्यवस्थामें भी वह घुस गअी है। मालिक-मजदूरका भेद आम और व्यापक

[1]. ग़ैर-मुस्तसना।

हो गया है और गरीब धनवानसे जलता है । अगर सब रोटीके लिअे मजदूरी करे, तो अूच-नीचका भेद न रहे; और फिर भी धनिक वर्ग रहेगा तो वह खुदको मालिक नहीं बल्कि अुस धनका रखवाला या ट्रस्टी मानेगा और अुसका ज्यादातर अुपयोग सिर्फ़ लोगोंकी सेवाके लिअे करेगा । जिसे अहिंसाका पालन करना है, सत्यकी भक्ति करनी है, ब्रह्मचर्यको कुदरती बनाना है, अुसके लिअे तो जात-मेहनत रामबाण-सी हो जाती है । यह मेहनत सचमुच तो खेतीमें ही है । लेकिन सब खेती नहीं कर सकते, अैसी आज तो हालत है ही । अिसलिअे खेतीके आदर्श[1]को खयालमें रखकर खेतीके अेवजमें आदमी भले दूसरी मजदूरी करे — जैसे कताओ, बुनाओ, बढओगिरी, लुहारी वगैरा वगैरा ।

सबको खुदके भंगी तो बनना ही चाहिये । जो खाता है वह टट्टी तो फिरेगा ही । जो टट्टी फिरता है वही अपनी टट्टी जमीनमें गाड दे यह अुत्तम रिवाज है । अगर यह नहीं ही हो सके तो प्रत्येक कुटुम्ब अपना यह फ़र्ज़ अदा करे । जिस समाजमें भंगीका अलग पेशा माना गया है, वहां कोओ बड़ा दोष पैठ गया है, अैसा मुझे तो बरसोंसे लगता रहा है । अिस जरूरी और तंदुरुस्ती बढ़ानेवाले (आरोग्य-पोषक) कामको सबसे नीच काम पहले-पहल किसने माना, अिसका अितिहास[2] हमारे पास नहीं है । जिसने माना अुसने हम पर अुपकार[3] तो नहीं ही किया ।

१ मक़सद । २. तारीख़ । ३. अेहसान ।

हम सब भंगी हैं, यह भावना[1] हमारे मनमें बचपनमें ही जम जानी चाहिये; और अुसका सबसे आसान तरीक़ा यह है कि जो समझ गये हैं वे जात-मेहनतका आरंभ पाखाना-सफ़ाईसे करें। जो समझ-बूझकर, ज्ञानपूर्वक यह करेगा, वह अुसी क्षणसे धर्मको निराले ढंगसे और सही तरीक़ेसे समझने लगेगा।

बालक, बूढ़े और बीमारीसे अपग[2] बने हुअे लोग अगर मजदूरी न करें, तो अुसे कोअी अपवाद न समझें। बालक मामें समा जाता है। अगर कुदरतके क़ानूनका भंग न किया जाय, तो बूढ़े अपग नहीं बनेंगे। और अुन्हें बीमारी तो होगी ही क्यों?

१०

सर्वधर्म-समभाव–१

ता. २३-९-'३०

मंगल-प्रभात

हमारे व्रतोंमें जो व्रत सहिष्णुता यानी बरदाश्तके नामसे पहचाना जाता था, अुसे यह नया नाम दिया गया है। सहिष्णुता शब्द अंग्रेजी शब्द 'टॉलरेशन' का अनुवाद है। यह मुझे पसंद नहीं था, लेकिन दूसरा नाम सूझता नहीं [illegible] भी वह पसंद नहीं था। अुन्होंने [illegible] शब्द सुझाया। मुझे वह भी पसंद नहीं दूसरे धर्मोंको बरदाश्त करनेमें अुनको (धर्मोंको)

---

१. भावना। २. अपाहिज।

कमी मान ली जाती है। आदरमें मेहरबानीका भाव आता है। अहिंसा हमें दूसरे धर्मोंके लिअे समभाव, बराबरीका भाव सिखाती है। आदर और सहिष्णुता अहिंसाकी नजरसे काफी नहीं है। दूसरे धर्मोंके लिअे समभाव रखनेके मूलमें अपने धर्मकी अपूर्णताका स्वीकार[1] आ ही जाता है। और सत्यकी आराधना, अहिंसाकी कसौटी यही सिखाती है। संपूर्ण[2] सत्य अगर हमने देखा होता, तो फिर सत्यका आग्रह किसलिअे? तब तो हम परमेश्वर हो गये। क्योंकि सत्य ही परमेश्वर है, अैसी हमारी भावना है। हम पूरे सत्यको पहचानते नहीं हैं अिसलिअे अुसका आग्रह रखते हैं, अिसीलिअे पुरुषार्थ[3]के लिअे जगह है। अिसमें हमारी अपूर्णताका स्वीकार आ जाता है। अगर हम अपूर्ण हैं तो हमारी कल्पनाका धर्म भी अपूर्ण है। स्वतंत्र धर्म संपूर्ण है। अुसे हमने देखा नहीं है, जैसे अीश्वरको देखा नहीं है। हमारा माना हुआ धर्म अपूर्ण है और अुसमें हमेशा हेरफेर हुआ करते हैं, होते रहेंगे। अैसा होनेसे ही हम अूपर और अूपर अुठ सकते हैं; सत्यकी ओर, अीश्वरकी ओर रोज-ब-रोज आगे बढ़ सकते हैं। और अगर आदमीके माने हुअे सब धर्मोंको हम अपूर्ण मानें, तो फिर किसीको अूंचा या नीचा माननेकी बात नहीं रहती। सब धर्म सच्चे हैं, लेकिन सब अपूर्ण हैं, अिसलिअे अुनमें दोष[4] हो सकते हैं। समभाव होने पर

१. अंगीकार, कबूल। २. पूरा-पूरा। ३. प्रयत्न, कोशिश।
४. दूषण।

भी हम अुनमें (सब धर्मोंमें) दोप देख सकते हैं। अपने धर्ममें भी दोप देखें। अुन दोपोंके कारण अुसको (अपने धर्मको) छोड़ न दें, लेकिन दोपोंको मिटावें। अगर अिस तरह समभाव रखें तो दूसरे धर्मोंमें से जो कुछ लेने लायक हो अुसे अपने धर्ममें जगह देनेमें हमें हिचकिचाहट नहीं होगी, अितना ही नहीं बल्कि अैसा करना हमारा धर्म हो जायेगा।

सब धर्म अीश्वरके दिये हुअे हैं, लेकिन वे मनुष्यकी कल्पनाके हैं। और मनुष्य अुनका प्रचार करता है, अिसलिअे वे अपूर्ण हैं। अीश्वरका दिया हुआ धर्म पहुंचके परे—अगम्य है। अिन्सान अुसे (अपनी) भापामें रखता है, अुसका अर्थ भी अिन्सान करता है। किसका अर्थ सच्चा है? सब अपनी अपनी दृष्टिसे, जब तक अुस दृष्टिके मुताबिक बरतते हैं तब तक, सच्चे हैं। लेकिन सबका ग़लत होना भी नामुमकिन नहीं। अिसीलिअे हम सब धर्मोंकी ओर समभाव रखें। अिससे अपने धर्मके लिअे अुदासीनता[१] नहीं आती, लेकिन अपने धर्मके लिअे हमारा जो प्रेम है वह अंधा न होकर ज्ञानवाला (ज्ञानमय) होता है, और अिसलिअे वह ज्यादा सात्त्विक, निर्मल बनता है। सब धर्मोंकी ओर समभाव हो तभी हमारे दिव्य चक्षु[२] खुलें। धर्मांधता[३] और दिव्य दर्शनमें अुत्तर-दक्षिणका अंतर है। धर्मका ज्ञान होने पर अड़चनें दूर होती हैं और समभाव

१ लापरवाही। २ भीतरकी आंखें। ३. मजहबी तास्सुब।

पैदा होता है । यह समभाव मनमें बढाकर हम अपने धर्मको ज्यादा पहचानेंगे ।

यहां धर्म-अधर्मका भेद नही मिटता । यहा तो जिन धर्मों पर मुहर लगी हुअी हम जानते हैं अुनकी बात है । अिन सब धर्मोंमें मूल सिद्धान्त – बुनियादी अुसूल तो अेक ही हैं । अुन सबमें सत स्त्री-पुरुष हो गये हैं, आज भी मौजूद हैं । अिसलिअे धर्मोंके लिअे समभावमें और धर्मियों — मनुष्यों — के लिअे समभावमें कुछ फर्क है । तमाम मनुष्योंके लिअे, दुष्ट[1] और श्रेष्ठ[2]के लिअे, धर्मी और अधर्मीके लिअे समभावकी जरूरत है, लेकिन अधर्मके लिअे कभी नही ।

तब सवाल यह अुठता है कि बहुतसे धर्म किसलिअे ? धर्म बहुतसे हैं यह हम जानते हैं । आत्मा अेक है, लेकिन मनुष्य-देह अनगिनत हैं । देहोंका अनगिनतपन टाले नही टलता । फिर भी आत्माकी अेकताको हम पहचान सकते हैं । धर्मका मूल अेक है, जैसे पेड़का; लेकिन अुसके पत्ते अनगिनत हैं ।

---

१. बुरेसे बुरा । २. अच्छेसे अच्छा ।

११

सर्वधर्म-समभाव–२

ता. ३०-९-'३०
मंगल-प्रभात

यह विषय[1] अैसा अहम[2] है कि यहां में अुसे जरा बढ़ाना चाहता हू । अपना कुछ तजरबा मैं बताअूं तो समभावका अर्थ शायद ज्यादा साफ़ होगा। जैसे यहां वैसे ही फिनिक्समें भी प्रार्थना रोज हुआ करती थी । अुसमें हिन्दू, मुसलमान और अीसाअी थे । मरहूम रुस्तमजी सेठ और अुनके बच्चे अनेक वार शामिल होते थे । रुस्तमजी सेठको 'मने वहालुं वहालु दादा रामजीनुं नाम' भजन बहुत पसंद था । मुझे जहा तक याद है, अेक बार मगनलाल (गाधी) या काशी (बहन) वह भजन हम सबको गवा रहे थे । रुस्तमजी सेठ हरखमे बोल अुठे : "'दादा रामजी' के बदले 'दादा होरमज्द' गाओ न ।" गवानेवालोंने और गानेवालोंने यह विचार बिलकुल सहज भावसे अपना लिया । और तबसे जब रुस्तमजी सेठ हाज़िर हों तब अचूक रूपमें और वे न हों तब कभी कभी हम वह भजन 'दादा होरमज्द' के नामसे गाते थे । मरहूम दाअूद सेठका बेटा मरहूम हुसेन तो आश्रममें बहुत बार रहता था । वह प्रार्थनामें अुत्साहसे शामिल होता था । वह खुद बहुत मीठे सुरमें 'ऑर्गन' के

१. मसला । २. महत्त्वका ।

नही आती थी। वैसा ही हिन्दू धर्म-पुस्तकोका था। अैसे तो कितनी ही बाते है जो आज भी मेरी समझमें नहीं आतीं। लेकिन अनुभवसे मैं देखता हूं कि जिसे हम समझ न सकें वह गलत ही है अैसा माननेकी जल्दबाजी करना भूल है। जो कुछ पहले समझमें नही आता था, वह आज दीयेके जैसा साफ मालूम होता है। समभाव बढ़ानेसे बहुत-सी गुत्थियां अपने-आप सुलझ जाती हैं, और जहां हमें दोष ही दिखाअी दे वहां अुसे दिखानेमे भी जो नम्रता और विनय[1] हममें होता है अुसके कारण किसीको दुःख नहीं होता।

अेक अुलझन शायद रहती है। पिछली बार मैंने कहा है कि धर्म-अधर्मका फर्क रहता है, और अधर्मके लिअे समभाव रखनेका यहां अुद्देश्य नही है। अगर अैसा ही हो तो क्या धर्म-अधर्मका निर्णय[2] करनेमे ही समभावकी सांकल टूट नही जाती? अैसा सवाल अुठेगा और अैसा (धर्म-अधर्मका) निर्णय करनेवाला गलती करे यह भी मुमकिन है। लेकिन अगर हममें सच्ची अहिंसा हो तो हम वैर-भावसे बच जाते हैं। क्योंकि अधर्मको देखते हुअे भी अधर्म आचरनेवाले, बरतनेवालेके लिअे तो हमारे मनमें प्रेमभाव ही होगा। और अिसलिअे या तो वह हमारी दृष्टि[3] अपनायेगा या हमारी गलती हमें दिखायेगा; या दोनो अेक-दूसरेके मतभेदको बरदाश्त [illegible]। आखिर, माननेवाला अगर अहिंसक नहीं होगा

. अदब। २ फैसला। ३. नुक्त-अे-नज़र।

तो वह गलती करेगा, लेकिन अगर हम अहिंसाके सच्चे पुजारी होंगे तो हमारी नम्रता अुसकी गलतीको दूर करेगी ही अिसमें शक नहीं। दूसरोंकी गलतीके खातिर भी हम अुन्हें दुःख नहीं देना है, खुद ही दुःख अुठाना है. यह सुनहला नियम जो पालता है वह सब संकटोंमें से अुबर जाता है।

१२

नम्रता

ता ७-१०-'३०

मंगल-प्रभात

अिसका व्रतोंमें अलग स्थान नहीं है और न हो सकता है। अहिंसाका वह अेक अर्थ है, या यों कहें कि अुसके अंदर नम्रता आ जाती है। लेकिन नम्रता कोशिश करके लानेसे नहीं आती है। वह तो स्वभावमें ही आ जानी चाहिये। जब पहले-पहल आश्रमकी नियमावलि बनाओी गओी, तो अुसका मसविदा मित्रवर्गको भेजा गया था। सर गुरुदास बॅनरजीने नम्रताको व्रतोंमें स्थान देनेकी सूचना की थी, और अुस वक्त भी अुसे व्रतोंमें शामिल न करनेका मैंने वही कारण बताया था जो मैं यहां लिखता हूं। लेकिन अगरचे अुसे व्रतोंमें स्थान नहीं है, फिर भी वह व्रतोंसे शायद ज्यादा जरूरी है; जरूरी तो है ही। लेकिन किसीने नम्रता महनतसे — अभ्याससे पाओी हो अैसा जाननेमें आया नहीं। सत्यकी आदत डाली जा सकती

है, दयाकी आदत डाली जा सकती है, (लेकिन) नम्रताकी आदत डालना यानी दंभकी आदत डालना अैसा कहा जा सकता है। यहां नम्रता वह चीज नहीं है, जो बडे लोगोंमें अेक-दूसरेके सम्मानके लिअे सिखाअी जाती है, या जिसकी तालीम दी जाती है। कोअी किसीको धरती पर लंबा होकर प्रणाम करता हो, लेकिन मनमें तो अुसके बारेमे नफ़रत भरी हो तो यह नम्रता नही है, चालाकी है। कोअी रामनाम रटा करे, माला फेरता रहे, मुनि जैसा बनकर समाजमे बैठे, पर अुसके भीतर अगर स्वार्थ[1] भरा हो तो वह नम्र नही, बल्कि ढोंगी है। नम्र मनुष्य खुद नही जानता कि कब वह नम्र है। सत्य वगैराका माप हम अपने पास रख सकते हैं, लेकिन नम्रताका कोअी माप नही होता। कुदरती नम्रता छिपी नही रहती। फिर भी नम्र मनुष्य खुद अुसे देख नहीं सकता। वसिष्ठ और विश्वामित्रकी मिसाल तो हम आश्रममें बहुत बार समझ चुके हैं। हमारी नम्रता शून्यताकी हद तक जानी चाहिये। हम कुछ हैं अैसा भूत मनमे पैठा कि नम्रता शायद हो गअी और हमारे सब व्रत मिट्टीमे मिल गये। व्रतका पालन करनेवाला अगर मनमें अपने व्रत-पालनका घमंड रखे, तो व्रतोंकी क़ीमत खो बैठे और समाजमें जहर सरीखा हो जाय। अुसके व्रतकी क़ीमत न तो समाज करेगा, न वह खुद अुसका फल भुगत सकेगा। नम्रताके मानी हैं 'मैं' का बिलकुल क्षय यानी मिट जाना।

१. खुदगरज़ी।

सोचनेसे मालूम हो जाता है कि अिस जगतमें तमाम जीव अेक रजकण — जर्रेके बराबर भी नहीं है। शरीरके रूपमें हम क्षणजीवी है। कालके अनंत चक्रमें सौ सालका प्रमाण निकाला ही नहीं जा सकता। लेकिन अगर अुस चक्करमें से हम निकल जाय — यानी 'कुछ नहीं' हो जाय, तो सब-कुछ हो जाय। 'कुछ' होना यानी ओिश्वरसे — परमात्मासे — सत्यसे अलग होना। 'कुछ' का मिट जाना यानी परमात्मामे मिल जाना। समुद्रमें रही हुअी बूंद समुद्रकी बडाअी[1] भुगतती है, लेकिन अुसका अुसे ज्ञान नहीं होता। ज्यों ही समुद्रसे वह अलग हुअी और अपनेपन[2]का दावा करने लगी कि अुसी दम वह सूख गअी। अिस जीवनको पानीके बुलबुलेकी जो अुपमा दी गअी है अुसमें मैं ज़रा भी अतिशयोक्ति[3] नहीं देखता। अैसी नम्रता — शून्यता — आदत डालनेसे कैसे आ सकती है? लेकिन व्रतोंको सही ढंगसे समझनेसे नम्रता अपने-आप आने लगती है। सत्यका पालन करनेकी अिच्छा रखनेवाला अहंकारी[4] कैसे हो सकता है? दूसरेके लिअे प्राण न्योछावर करनेवाला अपनी जगह बनाने कहां जाय? अुसने तो जब प्राण न्योछावर करनेका तय किया तभी अपनी देहको फेंक दिया।

अैसी नम्रताका मतलब पुरुषार्थका अभाव (न होना) तो नहीं? अैसा अर्थ हिन्दू धर्ममें कर डाला गया है सही। और अिसीलिअे आलसको और पाखंड[5]को

---

१ महत्ता। २. खुदी। ३ मुबालिगा। ४ मगरूर, घमंडी। ५ ढोंग।

बहुतेरे स्थानों पर जगह मिल गअी है । सचमुच तो नम्रताके मानी हैं तीव्रतम पुरुषार्थ, सख्तसे सख्त मेहनत । लेकिन वह सब परमार्थके लिअे होना चाहिये । अीश्वर खुद चौबीसों घण्टे अेक सांससे काम करता रहता है, अंगड़ाअी लेने तककी फुरसत नहीं लेता । अुसके हम हो जाय, अुसमें हम मिल जायं, तो हमारा अुद्यम[१] अुसके जैसा ही अतंद्रित[२] हो जायगा — होना चाहिये । समुद्रसे अलग हुअी बूंदके लिअे आरामकी कल्पना हम कर सकते हैं, लेकिन समुद्रमें रही हुअी बूंदको आराम कैसे मिल सकता है? समुद्रको अेक क्षणका, अेक पलका भी आराम कहां है? ठीक अुसी तरह हमारा है । अीश्वर-रूपी समुद्रमें हम मिल गये कि हमारा आराम गया, आरामकी जरूरत भी गअी । वही सच्चा आराम है, वही महा अशांतिमें शान्ति है । अिसलिअे सच्ची नम्रता हमसे तमाम जीवोंकी सेवाके लिअे सब-कुछ न्योछावर करनेकी आशा रखती है । सब-कुछ खतम होनेके बाद हमारे पास न अितवार रहता है, न शुक्रवार, न सोमवार । अिस हालतका वर्णन करना मुश्किल है, लेकिन वह अनुभवसे जानी जा सकती है । जिसने सब-कुछ न्योछावर किया है, अुसने अुसका अनुभव किया है । हम सब अुसका अनुभव कर सकते हैं । अुसका अनुभव करनेके अिरादेसे हम आश्रममें अिकट्ठा हुअे हैं । सब व्रत, सब कामकाज अुसका अनुभव करनेके लिअे हैं । यह-वह, कुछ न कुछ करते करते वह

१ कामकाज । २ नागाफिल, जाग्रत ।

किसी दिन हमारे हाथ लग जायेगी। अुसीको ढूंढने जानेसे वह मिलनेवाली नहीं है।

१३
स्वदेशी

प्रवचनोंमें 'स्वदेशी' पर (जेलसे) लिखना रहने ही दूंगा। (क्योंकि) राजनीतिसे संबंध रखनेवाले विषय न छेड़नेका मेरा जो संकल्प है, अुसमें कुछ कमी आ जायगी अैसा लगता है। स्वदेशीके बारेमें सिर्फ धार्मिक दृष्टिसे लिखने पर भी कुछ अैसा लिखना होगा, जिसका राजनीतिके साथ परोक्ष (कुछ दूरका) संबंध हो।

१३ अ
स्वदेशी-व्रत

स्वदेशी-व्रत अिस युगका महाव्रत है। जो चीज आत्माका धर्म है, लेकिन अज्ञान या दूसरे कारणोंसे आत्माको जिसका भान[1] नहीं रहा, अुसके पालनके लिअे व्रत लेनेकी जरूरत होती है। जो स्वभावसे मांस नहीं खानेवाला है, अुसे मांस न खानेका व्रत नहीं लेना पड़ता। मांस अुसके लिअे लालच नहीं है; अितना ही नहीं, मांसको देखते ही अुसे अुलटी हो जायगी।

स्वदेशी आत्माका धर्म है, लेकिन वह बिसर गया है, अिसलिअे अुसके बारेमें व्रत लेनेकी जरूरत है। आत्माके

१. ज्ञान, सुध।

लिये स्वदेशीका आखिरी अर्थ है समस्त स्थूल वस्तुओंसे आत्माका सम्पूर्ण छुटकारा। देह भी उसके लिये परदेशी है। क्योंकि देह दूसरी आत्माओंके साथ अैक्य हासिल करनेमें रुकावट डालती है, उसके रास्तेमें रोड़ा है। समस्त जीवोंके साथ अैक्य हासिल करते हुअे स्वदेशी-धर्मको जाननेवाला और पालनेवाला आदमी देहको भी छोड़ देगा। यह अर्थ सही हो तो हम आसानीसे समझ सकेंगे कि अपने पासके लोगोंकी सेवामें मग्न रहना, ओतप्रोत होना यह स्वदेशी-धर्म है। अैसी सेवा करनेमें दूरके लोग रह जाते हैं या अुनको नुकसान पहुँचता है, अैसा आभास होना सम्भव है। लेकिन यह आभास[1] ही होगा। स्वदेशीकी शुद्ध सेवा करनेसे परदेशीकी भी शुद्ध सेवा होती ही है। जैसा पिण्डमें, वैसा ब्रह्माण्डमें।

अिसके अुलटा, दूरकी सेवा करनेका मोह रखनेसे वह होती नहीं और पड़ोसीकी सेवा रह जाती है। यों बावाके दोनों — अिधर अुधर दोनों — बिगड़ते हैं। मुझ पर आधार रखनेवाले कुटुम्बके लोगोंको या गांवमें रहनेवालोंको मैं छोड़ दूं, तो मुझ पर अुनका जो आधार होता है वह चला जाता है। दूरके लोगोंकी सेवा करने जाऊंगा अुनकी सेवा करनेका जिनका धर्म है वह अुसे भूलता है। संभव है वह दूरके लोगोंको झूठे लाड़-प्यार करता हो; अिसलिअे वहांका वातावरण[2] तो वह बिगाड़ता ही है और अपने यहांका तो वह बिगाड़ कर ही गया था।

१ झूठा खयाल। २ फिजा।

यों हर तरहसे अुसने नुकसान ही पहुंचाया। अैसे अनगिनत हिसाबोंका खयाल करके स्वदेशी-धर्म साबित किया जा सकता है। अिसीलिअे 'स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावह' (अपना धर्म पालते हुअे मौत आये तो अच्छा, लेकिन दूसरेका धर्म खतरनाक होता है।) वाक्य निकला है। अुसका अर्थ अिस तरह जरूर किया जा सकता है: 'स्वदेशीका पालन करते हुअे मौत हो जाय तो भी अच्छा है, परदेशी तो खतरनाक ही है।' स्वधर्म यानी स्वदेशी।

स्वदेशीको न समझनेसे ही गड़बड़ी पैदा होती है। कुटुम्ब पर मोह रखकर मैं अुसे झूठे लाड करूं, अुसके खातिर धन चुराअूं, दूसरी चालें चलूं, यह स्वदेशी नहीं है। मुझे तो अुसके प्रति अपना धर्म पालन करना है। वह धर्म खोजते और अुसका पालन करते हुअे मुझे सर्वव्यापी, सब जगह फैला हुआ धर्म मिल जायेगा। अपने धर्मके पालनसे दूसरे धर्मवालेको या दूसरे धर्मको नुकसान पहुंचता ही नहीं, न पहुंचना चाहिये। पहुंचे तो हमारा माना हुआ धर्म स्वधर्म नहीं है, बल्कि स्वाभिमान[१] है और अिसलिअे वह तजने लायक है।

स्वदेशीका पालन करते हुअे कुटुम्बकी कुरबानी भी करनी पड़ती है। लेकिन अैसा करना पड़े तो अुसमें भी कुटुम्बकी सेवा होनी चाहिये। जैसे खुदको कुरबान करके हम खुदकी रक्षा कर सकते हैं, अुसी तरह हो सकता है कि कुटुम्बको कुरबान करके हम कुटुम्बकी रक्षा करते हों। मान

१. अपना गरूर।

लीजिये मेरे गांवमें महामारी[१] फैली है। अुस बीमारीमें फसे हुओंकी सेवामें मे अपनेको, अपनी पत्नीको, पुत्रोंको और पुत्रियोंको अगर लगाऊं और सब अुस बीमारीमें फंसकर मौतकी शरणमे चले जाय, तो मैंने कुटुम्बका नाश[२] नहीं किया, मैंने अुसकी सेवा ही की है। स्वदेशीमें कोओी स्वार्थ[३] नहीं है, अगर है तो वह शुद्ध स्वार्थ है। शुद्ध[४] स्वार्थ यानी परमार्थ, शुद्ध स्वदेशी यानी परमार्थकी आखिरी हद।

अिस विचारधाराके आधार पर मैंने खादीमें सामाजिक[५] शुद्ध स्वदेशी-धर्म देखा है। सब समझ सकें अैसा, अिस युगमे, अिस देशमे पालनेकी सबको बहुत जरूरत हो अैसा कौनसा स्वदेशी-धर्म हो सकता है? जिसके सहज[६] पालनसे भी हिन्दुस्तानके करोड़ोंकी रक्षा हो सकती है अैसा कौनसा स्वदेशी-धर्म है? जवाब मिला, चरखा या खादी।

अिस धर्मके पालनसे परदेशी मिलवालोका नुकसान होता है अैसा कोओी न माने। अगर चोरको चुराओी हुओी चीज लौटानी पड़े या चोरी करनेसे रोका जाय, तो अुसमें अुसे नुकसान नही है, लाभ है। अगर पड़ोसी शराब पीना या अफीम खाना छोड दे, तो अुससे कलालको या अफीमके दुकानदारको नुकसान नही, लाभ है। अयोग्य[७] ढंगसे जो (अपना) अर्थ[८] साधते हों, अुनके अुस अनर्थ[९]का अगर नाश हो तो अुससे अुनको और जगतको लाभ ही है।

१ वबा। २. खात्मा। ३. खुदगरजी। ४. पाक। ५ समाजी। ६. थोड़ा। ७ नाजायज। ८. मतलब। ९. बुरा मतलब।

लेकिन जो चरखेमे जैसे-तैसे सूत कातकर खादी पहन-पहनाकर स्वदेशी-धर्मका पूरा पालन हुआ मान लेते है, वे बडे मोहमे डूबे हुअे है। खादी सामाजिक स्वदेशीकी प्रथम सीढी है, वह स्वदेशी-धर्मकी आखिरी हद नही है। अैसे खादीधारी देखे गये है, जो और सब चीज़े परदेशी खरीदते है। वे स्वदेशी-धर्मका पालन नही करते। वे तो सिर्फ चालू बहावमे बह रहे है। स्वदेशी-व्रतका पालन करनेवाला हमेशा अपने आसपास निरीक्षण[1] करेगा और जहा जहा पड़ोसियोकी सेवा की जा सके, यानी जहा जहा अुनके हाथका तैयार किया हुआ जरूरतका माल होगा, वहा दूसरा छोडकर अुसे लेगा। फिर भले ही स्वदेशी चीज पहले-पहल महगी और कम दरजेकी हो। व्रतधारी अुसको सुधारनेकी कोशिश करेगा। स्वदेशी खराब है अिसलिअे कायर बनकर परदेशीका अिस्तेमाल करने नहीं लग जायेगा।

लेकिन स्वदेशी-धर्म जाननेवाला अपने कुअेंमें डूब नही जायेगा। जो चीज स्वदेशमें नही बनती हो या बड़ी तकलीफसे बन सकती हो, वह परदेशके द्वेष (डाह) के कारण अपने देशमे बनाने लग जाय तो अुसमें स्वदेशी-धर्म नही है। स्वदेशी-धर्म पालनेवाला परदेशीका द्वेष कभी नही करेगा। अिसलिअे पूर्ण स्वदेशीमें किसीका द्वेष नही है। वह संकुचित[2] धर्म नही है। वह प्रेममें से — अहिंसामें से — निकला हुआ सुदर धर्म है।

१ निगाह। २ तग खयालका।

१४
व्रतकी जरूरत

ता १४-१०-'३०
मंगल-प्रभात

व्रतके महत्त्व[1] के बारेमें मैंने अिस लेखमालामें जहां-तहां छुटपुट लिखा होगा। लेकिन जीवनको घड़नेके लिअे व्रत कितने जरूरी हैं, अिस पर यहा सोचना मुनासिब लगता है। व्रतोंके बारेमें मैं लिख चुका, अिसलिअे अब हम अुन व्रतोंकी जरूरतके बारेमे सोचें।

अैसा अेक सम्प्रदाय[2] है, और वह बलवान भी है, जो कहता है: 'अमुक नियमोंका पालन करना ठीक है, लेकिन अुसके बारेमें व्रत लेनेकी जरूरत नही है; अितना ही नही, वह मनकी कमजोरी बताता है और नुकसान करनेवाला भी हो सकता है। और व्रत लेनेके बाद अैसा नियम अड़चन-रूप लगे या पापरूप लगे, तो भी अुससे चिपके रहना पड़े यह तो सहन नही होता।' वे कहते हैं: 'मिसालके तौर पर शराब न पीना अच्छा है, अिसलिअे नही पीना चाहिये। लेकिन कभी पी ली गयी तो क्या हुआ? दवाके तौर पर अुसे पीना ही चाहिये। अिसलिअे अुसे न पीनेका व्रत लेना तो गलेमें फंदा डालनेके बराबर है। और जैसा शराबके बारेमें है, वैसा और

१ अहमियत। २. फिरका।

बातोंमें है। भलेके लिअे झूठ भी क्यों न बोलें?' मुझे अिन दलीलोंमें कोअी वजूद मालूम नहीं होता। व्रतका अर्थ है अडिग निश्चय। अड़चनोंको पार करनेके लिअे ही तो व्रतोंकी आवश्यकता है। अड़चन बरदाश्त करते हुअे जो टूटता नहीं, वही अडिग निश्चय माना जायेगा। अैसे निश्चयके बगैर अिन्सान लगातार अूपर चढ़ ही नहीं सकता, सारी दुनियाका अनुभव अैसी गवाही देता है। जो आचरण पापरूप हो अुसके निश्चयको व्रत नहीं कहा जायेगा। यह राक्षसी — शैतानी वृत्ति है। और जो निश्चय पहले पुण्यरूप लगा हो और आखिरमें पापरूप साबित हो, अुसे छोड़नेका धर्म जरूरी हो जाता है। लेकिन अैसी चीजके बारेमें कोअी व्रत नहीं लेता, न लेना चाहिये। सब धर्म जिसे मानते हैं, लेकिन जिसे आचरनेकी हमें आदत नहीं पड़ी है, अुसके लिअे व्रत लेना चाहिये। अूपरकी मिसालमें तो पापका सिर्फ आभास[1] हो सकता है। 'सच कहनेसे किसीको नुकसान पहुँचेगा तो?' अैसा विचार सत्यवादी करने नहीं बैठेगा। सत्यसे अिस जगतमें किसीका नुकसान नहीं होता, न होनेवाला है, अैसा वह विश्वास[2] रखे। अैसी तरह शराब पीनेके बारेमें। या तो अुस व्रतमें दवाके तौर पर शराब लेनेकी छूट रखनी चाहिये, या छूट न रखी हो तो व्रत लेनेके पीछे शरीरका खतरा अुठानेका निश्चय होना चाहिये। दवाके तौर पर भी शराब न पीनेसे देह छूट जाय तो भी क्या हुआ? शराब पीनेसे

१ गलत खयाल। २. यकीन।

१४

व्रतकी जरूरत

ता० १४-१०-'३०
मंगल प्रभात

व्रतोंके महत्त्व[१]के बारेमें मैंने अिस लेखमालामें जहाँ-तहाँ छुटपुट लिखा होगा। लेकिन जीवनको गढ़नेके लिअे व्रत कितने जरूरी हैं, अिस पर यहाँ सोचना मुनासिब लगता है। व्रतोंके बारेमें मैं लिख चुका, अिसलिअे अब हम अुन व्रतोंकी जरूरतके बारेमें सोचें।

अैसा अेक सम्प्रदाय[२] है, और वह बलवान भी है, जो कहता है: 'अमुक नियमोंका पालन करना ठीक है, लेकिन अुनके बारेमें व्रत लेनेकी जरूरत नहीं है; अितना ही नहीं, वह मनकी कमजोरी बताता है और नुकसान करनेवाला भी हो सकता है। और व्रत लेनेके बाद अैसा नियम अड़चन-रूप लगे या पापरूप लगे, तो भी अुससे चिपके रहना पड़े यह तो सहन नहीं होता।' वे कहते हैं: 'मिसालके तौर पर शराब न पीना अच्छा है, अिसलिअे नहीं पीना चाहिये। लेकिन कभी पी ली गयी तो क्या हुआ? दवाके तौर पर अुसे पीना ही चाहिये। अिसलिअे अुसे न पीनेका व्रत लेना तो गलेमें फंदा डालनेके बराबर है। और जैसा शराबके बारेमें है, वैसा और

---

१ अहमियत। २. फिरका।

बावनोंमें है । भलेके लिअे झूठ भी क्यों न बोलें ?' मुझे अिन दलीलोंमें कोअी वजूद मालूम नहीं होता । व्रतका अर्थ है अडिग निश्चय । अड़चनोंको पार करनेके लिअे ही तो व्रतोंकी आवश्यकता है । अड़चन बरदाश्त करते हुअे जो टूटता नहीं, वही अडिग निश्चय माना जायेगा । अैसे निश्चयके बगैर अिन्सान लगातार अूपर चढ़ ही नहीं सकता, सारी दुनियाका अनुभव अैसी गवाही देता है । जो आचरण पापरूप हो अुसके निश्चयको व्रत नहीं कहा जायेगा । यह राक्षसी — शैतानी वृत्ति है । और जो निश्चय पहले पुण्यरूप लगा हो और आखिरमें पापरूप साबित हो, अुसे छोड़नेका धर्म जरूरी हो जाता है । लेकिन अैसी चीजके बारेमें कोअी व्रत नहीं लेता, न लेना चाहिये । सब धर्म जिसे मानते हैं, लेकिन जिसे आचरनेकी हमें आदत नहीं पड़ी है, अुसके लिअे व्रत लेना चाहिये । अूपरकी मिसालमें तो पापका सिर्फ आभास[१] हो सकता है । 'सच कहनेसे किसीको नुकसान पहुंचेगा तो ?' अैसा विचार सत्यवादी करने नहीं बैठेगा । सत्यसे अिस जगतमें किसीका नुकसान नहीं होता, न होनेवाला है, अैसा वह विश्वास[२] रखे । अिसी तरह शराब पीनेके बारेमें । या तो अुस व्रतमें दवाके तौर पर शराब लेनेकी छूट रखनी चाहिये, या छूट न रखी हो तो व्रत लेनेके पीछे शरीरका खतरा अुठानेका निश्चय होना चाहिये । दवाके तौर पर भी शराब न पीनेसे देह छूट जाय तो भी क्या हुआ ? शराब पीनेसे

१ गलत खयाल । २. यकीन ।

देह रहेगी ही, असा पट्टा कौन लिखा सकता है? और अुस क्षण देह टिकी और दूसरे ही क्षण किसी और कारणसे छूट गअी, तो अुसकी जिम्मेवारी किसके सिर होगी? अिससे अुल्टा, देह छूट जाय तो भी शराब न पीनेकी मिसालका चमत्कारी[1] असर शराबकी लतमें फंसे हुअे लोगों पर होगा, यह दुनियाका कितना बड़ा फायदा है? 'देह छूटे या रहे, मुझे तो धर्म पालना ही है', असा भव्य–शानदार निश्चय करनेवाला ही अीश्वरकी झांकी किसी समय कर सकता है। व्रत लेना कमजोरीकी निशानी नहीं है, बल्कि बलकी निशानी है। अमुक बात करनी ठीक है तो फिर अुसे करना ही है, अिसका नाम है व्रत। अुसमें ताकत है। फिर अुसे व्रत न कहकर किसी और नामसे पहचाने तो अुसमें हर्ज नहीं। लेकिन 'जहां तक हो सकेगा करूंगा' असा कहनेवाला अपनी कमजोरीका या अभिमानका दर्शन कराता है; भले ही वह खुद अुसे नम्रता कहे। अुसमें नम्रताकी बू भी नहीं है। 'जहां तक हो सकेगा' असा वचन शुभ निश्चयोंमें जहर जैसा है, यह मैंने तो अपने जीवनमें और बहुतोंके जीवनमें देखा है। 'जहां तक हो सकेगा' वहां तक करनेके मानी हैं पहली ही अड़चन पर गिर जाना। 'जहां तक हो सकेगा वहां तक सच्चाअीका पालन करूंगा' अिस वाक्य[2]का कोअी अर्थ ही नहीं है। व्यापारमें 'हो सका तो फलां तारीखको फलां रकम चुकानेकी' किसी चिट्ठीका कहीं भी चेक या

१ जादुअी, हैरतअंगेज। २. जुमला।

हुंडीके रूपमें स्वीकार नहीं होगा। अिसी तरह जहां तक हो सके वहां तक सत्यका पालन करनेवालेकी हुंडी ओश्वरकी दुकानमें नहीं भुनाओ जा सकती।

ओश्वर खुद निश्चयकी, व्रतकी सपूर्ण मूर्ति है। अुसके कायदेमें से अेक जर्रा भी हटे तो वह ओश्वर न रह जाय। सूरज बड़ा व्रतधारी है, अिसलिअे जगतका काल[1] तैयार होता है और शुद्ध पचांग (जत्री) बनाये जा सकते हैं। अुसने अैसी साख जमाओ है कि वह हमेशा अुगा है और हमेशा अुगता रहेगा, और अिसलिअे हम अपनेको सलामत मानते हैं। तमाम व्यापारका आधार अेक टेक पर रहा है। व्यापारी अेक-दूसरेसे बंधे हुअे न रहें तो व्यापार चले ही नहीं। यों व्रत सर्वव्यापक, सब जगह फैली हुओ चीज दिखाओ देता है। तब फिर जहां अपना जीवन घड़नेका सवाल अुठता हो, ओश्वरके दर्शन करनेका प्रश्न हो, वहां व्रतके बगैर कैसे चल सकता है? अिसलिअे व्रतकी जरूरतके बारेमें हमारे दिलमें कभी शक पैदा ही न होना चाहिये।

---

१ वक्त, समय।

परिशिष्ट

[मंगल-प्रभातके पढ़नेवालोंके लिअे अुपयोगी होगा, अैसा मानकर आश्रमकी नियमावलिमें से नीचेका हिस्सा यहां दिया गया है ।]

१. सत्य

साधारण व्यवहार-कारोबारमें झूठ न बोलना या नहीं बरतना अितना ही सत्यका अर्थ नहीं है । लेकिन सत्य ही परमेश्वर है और अुसके सिवा और कुछ नहीं है । अिस सत्यकी खोज और पूजाके लिअे ही दूसरे सब नियमोंकी जरूरत रहती है और अुसीमें से वे निकले हैं । अिस सत्यके अुपासक, पुजारी अपने खयालकी देशकी भलाअीके लिअे भी झूठ न बोलें, न बरतें । सत्यके खातिर वे प्रह्लादकी तरह माता-पिता वगैरा बुजुर्गोंकी आज्ञा भी अदबसे[1] भंग करनेमें धर्म समझें ।

२. अहिंसा

प्राणियोंको घात न करना अितना ही अिस व्रतके लिअे बस नहीं है । अहिंसाका मतलब है बारीक जीव-जन्तुओंसे लेकर मनुष्य तक सब जीवोंके लिअे समभाव — बराबरीका, अपनेपनका भाव । अिस व्रतका पालन करनेवाला घोर अन्याय[2] करनेवाले पर भी गुस्सा न करे, लेकिन अुस पर प्रेमभाव रखे, अुसका भला चाहे और करे । लेकिन प्रेम करते हुअे भी अन्याय करनेवालेके

१ विनय । २ बेअिन्साफी ।

अन्यायके वस न हो, अन्यायका विरोध करे और अैसा करते हुअे जो कष्ट[1] वह दे, अुसे धीरजके साथ और अन्याय करनेवालेसे द्वेष किये वगैर सहन करे ।

३. ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्यके पालनके बिना अूपरके व्रतोका पालन नामुमकिन है । ब्रह्मचारी किसी स्त्री या पुरुष पर बद-निगाह न डाले अितना ही बस नही है, लेकिन मनसे भी विषयोंका खयाल या भोग न करे । और विवाहित[2] हो तो अपनी स्त्री या अपने पतिके साथ विषय-भोग[3] न करेगा, लेकिन अुसे मित्र समझकर अुसके साथ निर्मल सबध रखेगा । अपनी या दूसरी स्त्रीको या अपने पति या दूसरे पुरुषको विकारसे छूना या अुसके साथ विकारी बातचीत या दूसरी विकारी चेष्टा[4] करना यह भी स्थूल[5] ब्रह्मचर्यका भग है । पुरुष-पुरुषके बीच या स्त्री-स्त्रीके बीच या दोनोकी किसी चीजके बारेमे विकारी चेष्टा भी स्थूल ब्रह्मचर्यका भग है ।

४. अस्वाद

आदमी जब तक जीभके रसोंको नही जीतता, तब तक ब्रह्मचर्यका पालन बहुत मुश्किल है, अैसा अनुभव होनेसे अस्वादको अलग व्रत माना गया है । भोजन सिर्फ

---

१ तकलीफ़ । २ शादीशुदा । ३ सहवत । ४. हरकत । ५ बाहरी, मोटा ।

शरीरको निभानेके लिअे ही हो, भोगके लिअे हरगिज़ नहीं। अिसलिअे अुसे दवा समझकर संयमसे लेनेकी जरूरत है। अिस व्रतका पालन करनेवाला विकार पैदा करनेवाले मसाले वगैराको छोड दे। मांस खाना, शराव पीना, तम्बाकू पीना, भांग पीना वगैराकी आश्रममें मनाही है। अिस व्रतमें स्वादके लिअे दावतकी या भोजनके आग्रहकी मनाही है।

५. अस्तेय (चोरी न करना)

दूसरेकी चीज अुसकी अिजाज़तके विना न लेना अितना ही अिस व्रतके पालनके लिअे काफ़ी नहीं है। जो चीज जिस कामके लिअे मिली हो अुसका अुससे दूसरा अुपयोग करना या जितनी मुद्दत तकके लिअे मिली हो अुससे ज्यादा मुद्दत तक अुसको काममें लाना यह भी चोरी है।

अिस व्रतके मूलमें सूक्ष्म सत्य तो यह रहा है कि परमात्मा प्राणियोंके लिअे रोजकी ज़रूरतकी चीज़ ही रोज़ पैदा करता है और अुन्हें देता है। अुससे ज्यादा जरा भी पैदा नहीं करता। अिसलिअे आदमी अपनी कमसे कम ज़रूरतसे ज्यादा जो कुछ भी लेता है वह चोरी है।

६. अपरिग्रह (जमा न रखना)

अपरिग्रह अस्तेयके भीतर ही आ जाता है। वेज़रूरी चीज जैसे ली नहीं जा सकती, वैसे अुसका संग्रह भी नहीं

हो सकता। अिसलिअे जिस खुराक या सरोसामानकी जरूरत नहीं है, अुसका संग्रह अिस व्रतका भंग है। जिसे कुरसीके बिना चल सकता है वह कुरसी न रखे। अपरिग्रही अपना जीवन रोज़-ब-रोज सादा करता जाय।

७. जात-मेहनत

अस्तेय और अपरिग्रहके पालनके लिअे जात-मेहनतका नियम ज़रूरी है। और हर मनुष्य अपना गुज़ारा शरीरकी मेहनतसे करे तभी वह समाजके और अपने द्रोह[1]से बच सकता है। जिनका शरीर काम देता है और जो सयाने हो गये हैं असे स्त्री-पुरुषोंको चाहिये कि हाथमें निपटाया जा सके असा अपना रोजका सारा काम खुद निपटा ले और नाहक दूसरेकी सेवा न ले। लेकिन जब बच्चोंकी, दूसरे अपाहिज लोगोंकी और बूढ़े स्त्री-पुरुषोंकी सेवा करनेका मौका आये, तब अुसे करना समाजी ज़िम्मेदारी समझनेवाले हर अिन्सानका धर्म है।

अिस आदर्श[2]को लेकर आश्रममें ज्यादा मज़दूर रखे बिना काम ही नहीं चल सकता वहीं वे रखे जाते हैं, और अुनके साथ मालिक-नौकरकी तरह नहीं बरता जाता।

८. स्वदेशी

अिन्सान सब-कुछ कर सकनेवाला, सर्वशक्तिमान प्राणी नहीं है। अिसलिअे वह अपने पड़ोसीकी सेवा करनेमें

---

१ बेवफाअी। २. मकसद।

शरीरको निभानेके लिअे ही हो, भोगके लिअे हरगिज़ नहीं। अिसलिअे अुसे दवा समझकर संयमसे लेनेकी ज़रूरत है। अिस व्रतका पालन करनेवाला विकार पैदा करनेवाले मसाले वगैराको छोड दे। मांस खाना, शराब पीना, तम्बाकू पीना, भांग पीना वगैराकी आश्रममें मनाही है। अिस व्रतमें स्वादके लिअे दावतकी या भोजनके आग्रहकी मनाही है।

५. अस्तेय (चोरी न करना)

दूसरेकी चीज अुसकी अिजाजतके बिना न लेना अितना ही अिस व्रतके पालनके लिअे काफ़ी नहीं है। जो चीज जिस कामके लिअे मिली हो अुसका अुससे दूसरा अुपयोग करना या जितनी मुद्दत तकके लिअे मिली हो अुससे ज्यादा मुद्दत तक अुसको काममें लाना यह भी चोरी है।

अिस व्रतके मूलमें सूक्ष्म सत्य तो यह रहा है कि परमात्मा प्राणियोंके लिअे रोज़की ज़रूरतकी चीज़ ही रोज पैदा करता है और अुन्हें देता है। अुससे ज्यादा जरा भी पैदा नहीं करता। अिसलिअे आदमी अपनी कमसे कम ज़रूरतसे ज्यादा जो कुछ भी लेता है वह चोरी है।

६. अपरिग्रह (जमा न रखना)

अपरिग्रह अस्तेयके भीतर ही आ
चीज़ जैसे ली नहीं जा सकती,

हो सकता । अिसलिअे जिस खुराक या सरोसामानकी जरूरत नही है, अुसका संग्रह अिस व्रतका भग है । जिसे कुरसीके विना चल सकता है वह कुरसी न रखे । अपरिग्रही अपना जीवन रोज़-ब-रोज सादा करता जाय ।

७. जात-मेहनत

अस्तेय और अपरिग्रहके पालनके लिअे जात-मेहनतका नियम जरूरी है। और हर मनुष्य अपना गुजारा शरीरकी मेहनतसे करे तभी वह समाजके और अपने द्रोह[1]से बच सकता है । जिनका शरीर काम देता है और जो ाने हो गये हैं अैसे स्त्री-पुरुषोंको चाहिये कि हाथसे ाटाया जा सके अैसा अपना रोजका सारा काम खुद ..ाटा ले और नाहक दूसरेकी सेवा न ले । लेकिन जब बच्चोंकी, दूसरे अपाहिज लोगोंकी और बूढे स्त्री-पुरुषोंकी सेवा करनेका मौका आये, तब अुसे करना समाजी जिम्मेवारी समझनेवाले हर अिन्सानका धर्म है ।

अिस आदर्श[2]को लेकर आश्रममें जहां मजदूर रखे विना काम ही नही चल सकता वही वे रखे जाते हैं, और अुनके साथ मालिक-नौकरकी तरह नही बरता जाता ।

८. स्वदेशी

अिन्सान सब-कुछ कर सकनेवाला, सर्वशक्तिमान प्राणी नही है । अिसलिअे वह अपने पडोसीकी सेवा करनेमें

---

१ बेवफाअी । २. मकसद ।

जगतकी सेवा करता है । अिस भावनाका नाम स्वदेशी है । अपने पासवालोंकी सेवा छोड़कर दूरवालोकी सेवा करने या लेने जो दौड़ता है, वह स्वदेशीका भंग करता है। अिस भावनाके पोषणसे संसार सुव्यवस्थित[१] रह सकता है। असके भंगमें अव्यवस्था[२] रही है । अिस नियमके मुताबिक जहां तक हो सके, हम अपने पड़ोसीकी दुकानके साथ व्यवहार – कारोबार रखें, देशमें जो चीज़ बनती हो या आसानीसे बन सकती हो, वह हम परदेशसे न लायें। स्वदेशीमें स्वार्थ[३]को जगह नहीं है । अिन्सान खुद खानदानके, खानदान शहरके, शहर देशके और देश जगतके कल्याण[४]के लिअे कुरबान हो जाय ।

९. अभय

सत्य, अहिंसा वग़ैरा व्रतोका पालन निडरताके बिना नामुमकिन है । और आजकल जब कि सब जगह डर फैल रहा है, निडरताका चिंतन और अुसकी तालीम बहुत जरूरी होनेसे अुसे व्रतोंमें स्थान दिया गया है । जो सत्यपरायण[५] रहना चाहे, वह न जातपांतसे डरे, न सरकारसे डरे, न चोरसे डरे, न ग़रीबीसे डरे, और न मौतसे डरे ।

१०. अस्पृश्यता-निवारण (छूतछात मिटाना)

हिन्दू धर्ममें छुआछूतके रिवाजने जड़ पकड़ ली है। अुसमें धर्म नहीं है बल्कि अधर्म है, अैसा हमारा मानना

१. बाक़ायदा । २. बेक़ायदगी । ३. खुदग़रज़ी । ४. भले। ५. सचाईपरस्त ।

है। अिसलिअे अस्पृश्यता-निवारणको नियमोंमें स्थान दिया गया है। अछूत माने जानेवालोंके लिअे दूसरी जातवालोंके समान ही आश्रममें स्थान है।

आश्रम जातिभेदको नहीं मानता। जातिभेदसे हिन्दू धर्मको नुकसान हुआ है असा असका मानना है। असमें रही हुअी ऊँच-नीचकी और छूआछूतकी भावना अहिंसा धर्मको मार डालनेवाली है। आश्रम वर्णाश्रम-धर्मको मानता है। असमें वर्ण-व्यवस्था सिर्फ धंधेके मुताबिक है असा लगता है। अिसलिअे वर्ण-नीति पर चलनेवाला आदमी मा-बापके धंधेसे गुजारा चलाकर बाकीका वक्त शुद्ध ज्ञान लेने और बढ़ानेमें लगा दे। स्मृतियोंकी आश्रम-व्यवस्था जगतका भला करनेवाली है। लेकिन वर्णाश्रम-धर्म मंजूर होने पर भी आश्रमका जीवन गीताके बताये हुअे व्यापक और भावना-प्रधान (भावनाहीन जड़ नहीं) संन्यासके आदर्शको स्थिर रखा हुआ होनेसे आश्रममें वर्णभेदको जगह नहीं है।

११ सहिष्णुता (बरदाश्त)

आश्रमका यह मानना है कि जगतके धर्म, मज़हब सत्यको प्रगट करनेवाले हैं। लेकिन वे सब अपूर्ण आदमियोंके जरिये प्रगट होनेसे सबमें अपूर्णता या असत्यका मिश्रण हुआ है। अिसलिअे जैसे हम अपने धर्मका आदर करते हैं वैसा ही हमें दूसरोंके धर्मका

१. जड़ नहीं।

अिज्जत करनी चाहिये। अैसी सहिष्णुता जहां हो वहां अेक-दूसरेके धर्मका विरोध[1] मुमकिन नहीं, न दूसरे धर्म-वालोंको अपने धर्ममें लानेकी कोशिश मुमकिन है; लेकिन सब धर्मोंमें रहे हुअे दोष[2] दूर हों अैसी ही प्रार्थना और अैसी ही भावना[3] हमेशा होनी चाहिये।

---

१ मुखालिफत। २. खामिया। ३. विचार, चाह।

शब्दोंके अर्थ

अंग – हिस्सा
अटूट – लाज़वाल
अतन्द्रित – नागाफ़िल
अध्याय – बाब
अनन्तगुनी – बेहद
अनर्थ – बुरा काम
अनुभव – तजरबा
अनुमान – अटकल, अन्दाजा
अन्याय – बेइन्साफ़ी
अलग – अलाहिदा
अपरिग्रह – जमा न करना
अभय – नहीं डरना
अभ्यास – मश्क, आदत
अमुक – फलां
अमूर्छ – नागाफ़िल
अमूर्छित – नागाफ़िल
अयोग्य – नाजायज
अल्प – नाचीज, छोटा, थोड़ा
अवधूत – मस्ताना, फकीराना
अव्यवस्था – बेकायदगी, बेइन्तज़ामी
अस्तेय – चोरी न करना
अस्पृश्यता-निवारण – अछूतपन मिटाना
अस्वाद – जीभका चटकारा जीतना, जायकेका मजा न लेना, जायकेके मजेका गुलाम न होना
अस्वाद – बेलज्जती
अहंकारी – मगरूर, घमंडी
आग्रह – ज़ोर देना, असरार
आचरना – बरतना
आत्महत्या – खुदकुशी
आत्मा – रूह
आत्मार्थी – आत्माका कल्याण चाहनेवाला
आत्यंतिक – बिलकुल, आख़िरी, हद दरजेका
आदर्श (सं०) – मकसद
आदर्श (वि०) – नमूनेदार
आधार – आसरा, सहारा
आभास – वहम, झूठा खयाल, झूठा नज़ारा
आराधना – भक्ति
आरोग्य – तन्दुरुस्ती
आरोग्य-पोषक – तन्दुरुस्ती बढ़ाने-वाला, सेहतबख्श
आवरण – ढक्कन, पर्दा

आवृत्ति – अेडिशन
अिच्छा – मरज़ी
अिन्द्रिय – हवास
अुत्तरोत्तर – बराबर
अुत्पत्ति – पैदाअिश
अुदासीनता – लापरवाही, बेपरवाही
अुद्देश्य – मकसद
अुपकार – अेहसान
अुपद्रव करना – सताना
अुपयोग – अिस्तेमाल
अुपवास – रोज़ा, फ़ाका
अुपाय – तरीका
अुपासक – पुजारी
अुबरना – बचना, छूटना
अुलटी – कै
अेकांगी – अिकतरफ़ा
ओतप्रोत – लगा हुआ, मशगूल
करुणा – रहम
कर्तव्य – फ़र्ज़
काम – नफ़्सपरस्ती, शहवत
कामधेनु – चाहा हुआ देनेवाली गाय
कायरता – बुज़दिली
कुटुम्ब – खानदान
क्रोध – गुस्सा
क्षय – मिट जाना

क्षीण – कम, घटा हुआ
घातक – मार डालनेवाला
चमत्कारी – जादुअी, हैरतअंगेज़
चिन्तन – गौर, गौरोफ़िक्र, चिन्तवन
चेष्टा – हरकत
छनजीवी – क्षणिक, फ़ानी
जड़ – सुस्त
जड़ता – सुस्ती
जनन-अिन्द्रिय – जिसमें बच्चा पैदा होता है वह अिन्द्रिय
जातिभेद – जात जातके बीच फ़र्क
ज्ञान – अिल्म
ज्ञानपूर्वक – समझ-बूझकर
टीका-टिप्पणी – नुक्ताचीनी
तंत्र – हुकूमत
तीव्रतम पुरुषार्थ – सख़्तसे सख़्त मेहनत
तुच्छ – नाचीज़
दावत – ज्योनार
दिगम्बर – नंगा
दिव्य चक्षु – भीतरकी आंख, ज्ञानकी आंख
दुष्ट – सबसे खराब
दृढ़ता – मज़बूती
दृष्टांत – मिसाल
दृष्टि – नुक्त-अे-नज़र

ब्रह्माण्ड – विश्व, खल्क

भंडार – रसदखाना
भंवर – जहां पानी गोल चक्कर घूमता है, भौंर
भरपेट – पेट भर जाय अुतना
भविष्य – मुस्तक़बिल
भव्य – शानदार
भान – ज्ञान, सुध, खबर, खयाल
भावना – खयाल, चाह, जज़्बा
भावनाप्रधान – भावनाशील, जड़ नहीं, जज़्बातवाला
भाष्य – ब्योरेवार टीका, तफ़सीर
भेद – फ़र्क़
भोग-विलास – चैनबाज़ी, चैन-अमन, अैश-आराम
भ्रष्ट होना – बिगड़ना

मंगल – कल्याणकारी
मनुष्यप्राणी – अिन्सान
महत्ता – बड़ाअी
महत्त्व – अहमियत
महामारी – वबा
महिमा – बड़ाअी
मात्रा – मिक़दार, अेक बार लेनेका प्रमाण (दवाकी खुराक)
मान – अिज़्ज़त, आदर
मानसिक–मनकी (मनसे की हुअी)

मिथ्याचारी – ढोंगी, जिसका आचार बेकार साबित होता है
मुक्ति – आज़ादी, नजात
मूढ़ – मूरख, अज्ञान
मूल सिद्धान्त – बुनियादी अुसूल
रंक – निर्धन
रजकण – ज़र्रा
रत्न-चिन्तामणि – अैसा रतन जो जिस चीज़की अिच्छा हो वह दे
रस – मज़ा, भोगकी लालसा, भोगकी तेज अिच्छा; छह रस – कड़वा, तीखा, मीठा, खारा, खट्टा, कसैला
राक्षसी – शैतानी
राजनीतिक – सियासी
रामबाण – अकसीर, बेकार न जानेवाला
राय – राजा
राय-रंक – अमीरोगरीब
राष्ट्रीय – क़ौमी
लक्षण – सिफ़त, पहचान, निशानी, गुण
वरण करना – पसंद करना
वाक्य – जुमला
वातावरण – फ़िज़ा
विकार – मन या शरीरका बिगाड़, नफ़्स, बुरा खयाल

विचारणा – विचार करना
विचारधारा – विचारोंका सिलसिला
विचारशील – सोच-विचार करनेवाला
विचित्र – अजीब
विद्वान – आलिम
विनय – अदब
विमुख करना – फेर लेना
विरोध – मुखालिफत
विवाहित – शादीशुदा
विवेक – तमीज, भलेबुरेकी परख
विशाल – वसीअ
विश्वास – यकीन, भरोसा
विषय – मसला
विषय – नफ्स
विषय-भोग – शहवत
वीर्य – धातु, धात, मनी
वृत्ति – फितरत
व्यभिचारी – बेवफा
व्यवहार – कारोबार
व्याख्या – तशरीह
व्यापक – तंग नहीं, वसीअ
व्रत – अहद, नेम, नियम
व्रतधारी – व्रत पालनेवाला
शाप – बददुआ
शाश्वत – हमेशाका, कायम-ओ-दायम, लाफानी
शुद्ध – सही
शून्य – सिफर
शून्यता – सिफर, बेखुदी
शोक – रंज, गम
शोभना – फबना
श्रेष्ठ – सबसे अच्छा

संकट – मुसीबत
संकल्प – पक्का अिरादा
संकुचित – तंग खयालका
संग्रह – मजमूआ, जमाव
संपूर्ण – पूरा-पूरा
संप्रदाय – फिरका
संयम – काबू
संस्कृति – तमद्दुन
संस्था – अंजुमन
सत्यपरायण – सचाअीपरस्त
सफल – कारगर
सभ्यता – तहजीब
समभाव – बराबरीका भाव
समर्थ – ताकतवर
सर्वशक्तिमान – सब कुछ कर सकनेवाला
सहज – कुदरती तौर पर, स्वाभाविक, आसानीसे, थोड़ा
सहिष्णुता – बरदाश्त
साक्षात्कार – दर्शन, दीदार
साधन – जरिया

साधना – मकसदको पानेकी कोशिश
साध्य – मकसद
सामग्री – सामान
सामाजिक – समाजी
सार-असार – दम-बेदम
सुव्यवस्थित – बाकायदा
सूक्ष्म – बारीक
स्थूल – मोटा, बाहरी
स्मृति – धर्मशास्त्र, धर्मकी पुस्तक

स्वाद – लज्जत, ज़ायका
स्वाभिमान – अपना गरूर
स्वामी – मालिक
स्वार्थ – खुदगरज़ी
स्वार्थी – मतलबी
स्वीकार – तसलीम, कबूल

हर्ष – बड़ी खुशी
होमना – निछावर करना